भक्त प्रह्लाद

(पौराणिक नाटक)

लेखक—

वीर शिवाजी, सुल्ताना डाकू, दीन बन्धु,
... निर्धन, पर्दे का शिकार आदि-आदि
नाटकों के रचयिता—

नत्थीमल उपाध्याय "बेचैन"

धौलपुरी।

प्रकाशक—

किशनलाल द्वारकाप्रसाद,
बम्बई भूषण यन्त्रालय, मथुरा।

सन् १९३८ } { मूल्य ॥) आ.

लेखक—
सत्यीमल उपाध्याय "बेचैन"
धौलपुरी ।

समर्पण

-०-
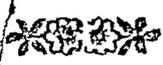
तरह देव ! आपके अगणित उपकारों की बात ?
अनी लिख न सकेगी, चाहे लिखें उसे दिन रात ॥
धर्म-धुरीण, प्रवीण आप हैं, बुद्धिमान, विद्वान महान ।
रखते हैं श्रीमान सर्वदा अपने आश्रित जन का ध्यान ॥
र्ति-कौमुदी नाथ ! आपकी फैल रही है चारों ओर ।
देखकर अतिशय हर्षित होता मेरा चित्त-चकोर ॥
नका तेज देखकर, होते हैं दुर्जन भयभीत ।
यहां गाते हैं तब गौरव के गीत पुनीत ॥
नीत हैं आप दयामय, वीतराग विज्ञानी हैं ।
नत्थीम गुरुवर हैं, मुझ याचक के दानी हैं ॥
कुछ भी, दानी कब करता है चाह ?
धाम हैं, क्षमा-प्रीति के सिन्धु अथाह ॥
के यह तुच्छ भेंट मैं लाया हूँ ।
प" यह आशा करके आया हूँ ॥

किशनला

बम्बई भू

न १९३८

तत्रभवान् के सद्गुणों का पुजारी,
नत्थीमल उपाध्याय "बेचैन"

पात्र-परिचय ।

(पुरुष—पात्र)

भगवान्	परब्रह्म परमात्मा
हिरण्यकशिपु	विश्वविजयी दैत्यराज, कश्यपसुत
प्रह्लाद	हिरण्यकशिपु का पुत्र
शंडामर्क	शुक्रयाचार्यजी के पुत्र
वज्रमूर्ति	हिरण्यकशिपु का सेनाध्यक्ष
वक्रलोचन	,, का प्रधान मन्त्री
विकटानन	,, का मन्त्री
दुर्दान्त	,, का एक दर्बारी
भयंकर	,, का सेवक
सुबोध	प्रह्लाद का सखा
नारदजी	देवर्षि
दरबारीलाल	एक स्वार्थी, सुबोध का पिता

स्त्री पात्र ।

महारानी	हिरण्यकशिपु की भार्या
ढुंढा (होलिका)	,, की भगिनी
निर्मला } विमला }	महारानी की दासियाँ
सुमति	धनदास की स्त्री

* श्रीहरिः *
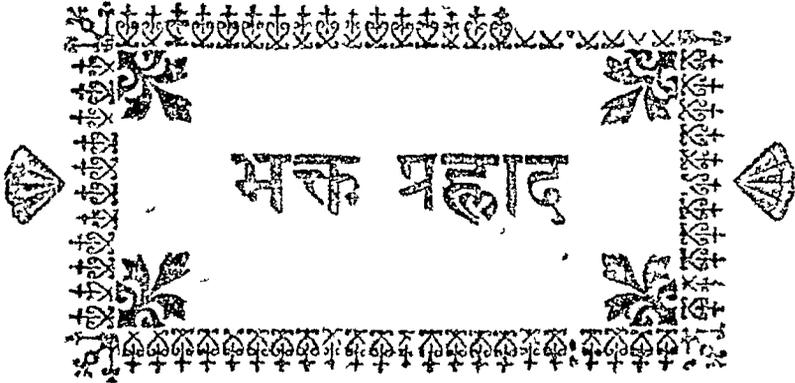
❀ प्रथम अंक ❀

दृश्य पहला ।

स्थान—दैत्यराज हिरण्यकशिपु की राज सभा ।

समय—रात्रि ।

[दरबारी गण यथा स्थान बैठे हुए हैं । उनके मध्य में हिरण्यकशिपु एक रत्नजटित उच्च सिंहासन पर आसीन है । उसके सामने कुछ सुन्दरियाँ नृत्य कर रही है]

(गायन और नृत्य)

लावनी ।

हम कर सोलह शृङ्गार यहाँ आती हैं ।
अपने स्वरूप का जाल बिछा जाती हैं ।
हम गायन-वादन और नृत्य करती हैं ।
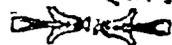
पुरुषों के मन को पल भर में हरती हैं ॥
हम रसिकों के अनुराग-रङ्ग से रञ्जित,
कुछ-कुछ अनंग की झलक दिखा जाती हैं।
हम कर सोलह शृङ्गार यहां आती हैं ॥
इन कजराले काले नयनों के मारे
सैकड़ो तड़पते रहते युवक बिचारे।
उनका मन-मधुकर रूप-सुरस का प्यासा,
घबड़ाता है, हम हाथ नहीं आती हैं ॥
अपने स्वरूप का जाल बिछा जाती हैं ॥

(गायिकाएँ जाती हैं, और दैत्यराज हिरण्यकशिपु मदिरा-पान करता है)

दैत्यराज-(अपने दरबारियों से) वीरो ! आप लोग जानते हैं, मैंने अपने पराक्रम से देवताओं को परास्त किया है।

१ दरबारी-अन्नदाता के जय नाद से अब तक आकाश गूँज रहा है।

२ दरबारी-सरकार की शक्ति के समक्ष सुर, नर और किन्नर सभी के मस्तक नत हो गये हैं।

३ दरबारी-देवताओं की स्त्रियाँ अब तक भय से काँप रही हैं।

४ दरबारी-उनके बच्चे भेड़ों की तरह मिमिया रहे हैं।

दैत्यराज-संसार मेरी शक्ति का लोहा मानता है, मुझे क्रोधित देखकर धरित्री धँसकने लगती है। आप लोग जानते हैं मैं कौन हूँ ?

५ दरबारी-आप हमारी जाति की अनुपम विभूति हैं ?

६ दरबारी-अन्नदाता तीनों लोकों के स्वामी हैं, हमारे ईश्वर हैं। आर्य्यावर्त्त के सम्राट् हैं।

दैत्यराज-ठीक कहते हो। मैं आज्ञा देता हूँ, कि मेरी समस्त प्रजा मेरे अतिरिक्त किसी दूसरे को ईश्वर न समझे। धर्म और मोक्ष का नाम न ले। कोई भी मनुष्य यज्ञ दान और तप नहीं करे। कोई रामकी उपासना न करे। भक्ति का स्वांग कहीं नहीं रचा जाय, मेरे साम्राज्य में जो कोई मेरी इस आज्ञा का उल्लंघन करेगा, वह मृत्यु का दण्ड पावेगा। जाओ, मेरे इस आदेश को घर-घर पहुँचाओ इस कार्य के लिये हजारों राक्षस नियुक्त कर दो कि वे लोग हवा की तरह प्रत्येक नगर और प्रत्येक ग्राम में पहुँच कर इस राजाज्ञा को सुनादें। और जो कोई इसको न माने उनको मौत के घाट उतार दें।

(बहुत से राज्य कर्मचारी अभिवादन करके जाते हैं)

(पर्दा गिरता है)

अङ्क पहला दृश्य दूसरा

स्थान—अन्तःपुर।

समय—रात्रि।

[महारानी अपने शयनागार में बैठी हुई कभी कुछ सोचने लगती है और कभी गाने लगती है।]

गीत नं० २

ओ सुन्दर, सुखकर अरमान।

तेरे मद में झूम रहे हैं, मेरे प्यारे प्राण॥

दिव्य विचारों का ताना है, तूने भव्य वितान ॥
॥ ओ सुन्दर० ॥
गगन, पवनमें, जलमें, थलमें तेरा ही संगीत ।
और अनल में सुनती हूँ मैं, तू, है मेरा मीत ॥
॥ ओ सुन्दर० ॥
कोई छोटा-बड़ा नहीं है, सब हैं एक समान ।
सबको कर तू प्यार हृदय से, व्यर्थ न कर अभिमान ॥
ओ सुन्दर सुखकर अरमान ॥
हाय ! बड़प्पन में क्यों फूला रहता तू अनजान ।
जग के हित में करदे, अपना तू जीवन-बलिदान ॥
ओ सुन्दर सुखकर अरमान ॥

[प्रहलाद आता है ।]

प्रह्लाद—माता जी ! आपका यह गीत तो बड़ा सुन्दर मालूम होता है । कृपया एक बार और गाइए ।

[महारानी गीत को पुनः गाती हैं]

प्रह्लाद—(गीत दुहराते हुए कुछ सोचता है) "कोई छोटा-बड़ा नहीं है, सब हैं एक समान ।" (महारानी से) माताजी आपके गीत का यह पद तो बिल्कुल ग़लत है । यह तो नितान्त असम्भव है कि संसार में कोई छोटा और कोई बड़ा न रहे । हमारे पिता जी को जहाँ त्रैलोक्य का वैभव प्राप्त है । वहाँ ऐसेभी करोड़ों नर-नारी हैं जो अपना पेट भी बड़ी मुश्किल से भर पाते हैं । वह समस्त भू-मण्डल के सम्राट हैं, इस लोक के ईश्वर हैं तथा और सब नर, किन्नर, असुर और सुर उनकी कृपा के इच्छुक हैं । मैं महाराज कुमार हूँ परन्तु और सब लड़के ऐसे हैं,
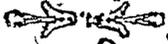
जिनको मेरा सा सुख-भोग स्वप्न में भी उपलब्ध नहीं हो सकता! आप सम्राज्ञी हैं, और सैकड़ों महिलाएँ आपकी दासी हैं। आपकी सेविकाएँ आपकी बराबरी किस प्रकार कर सकती हैं? मेरे नौकर मेरे समान कैसे हो सकते हैं। पिताजीकी समानता का दावा संसार में कौन कर सकता है?

महारानी-पुत्र! तुम अभी बच्चे हो। तुम इस गूढ़ विषय को समझने में अभी असमर्थ हो। संसार से विषमता का दूर होना तो असम्भव है। कोई राजा और कोई प्रजा कोई धनी और कोई निर्धन, कोई बलवान् और कोई बलवान और कोई निर्बल, कोई अफसर और कोई मातहत कोई स्वस्थ और कोई रोगी, कोई सुन्दर कोई कुरूप, कोई विद्वान् और कोई मूर्ख, कोई धर्मात्मा और कोई पापी कोई ऊँच और कोई नीच कोई स्वामी और कोई सेवक, ये सब परस्पर की विरोधात्मक जोड़ियां (द्वन्द्व) तो अमिट हैं। परन्तु वास्तव में इन दोनों प्रकार के मनुष्यों में कोई अन्तर नहीं है। सभी प्राणी उसी एक परम पिता की सन्तान हैं। सभी का शरीर पंच तत्त्व से बना हुआ है, और पंचतत्त्व में ही मिल जाता है। सबके शरीर में एक ही प्रकार का हाड़ मांस और रुधिर है।

रवि, शशि, तारागण करते हैं, सबको सम आलोक प्रदान।
वायु, वारि, भू, गगन, तेज भी करते हैं व्यवहार समान॥
सकल जगत् के प्राणी प्यारे! एक पिता की हैं सन्तान।
कोई छोटा-बड़ा नहीं है, सब हैं जग में एक समान॥
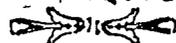
ममता और अहन्ता में पड़, जो करते हैं अत्याचार।
उन पर मुझको तरस आता है, क्षमा करे उनको कर्त्तार॥
सबको अपना बन्धु समझ तू, सबको कर तू प्यार सदा।
सबका हित करने को प्यारे, रहता तू तैयार सदा॥

(हिरण्यकशिपु प्रविष्ट होता है)

हिरण्य०—(क्रोध पूर्वक) महारानी! मैं तुमसे फिर कहे देता हूँ कि प्रहलाद को इस प्रकार की शिक्षा मत दिया करो। इस प्रकार की बुरी-बुरी बातें सिखला कर तुम लड़के का जीवन-नाश कर रही हो। मेरे पुत्र को ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए जिससे वह वीर और बलवान बन सके, मेरे गुणों का अनुकरण कर सके। तुम्हारी बुद्धि मारी गई है, महारानी! मेरा पुत्र यदि सबको अपना बन्धु समझेगा, सबको प्यार करेगा, तो मेरा पद-गौरव मिट्टी में मिल जावेगा।

महारानी—प्रजाजनों को महाराजकुमार यदि अपना बन्धु समझे और प्यार करे तो क्या महाराजकी शान घट जायगी?

हिरण्य०—चुप रहो महारानी! यदि मेरे विचारों के विरुद्ध एक भी शब्द कहोगी तो ठीक नहीं होगा।

(महारानी चुप होजाती हैं)

हिरण्य०—(प्रहलाद से) बेटा! तुम्हारी माता तुमको ग़लत पढ़ाती हैं। इनकी बातों पर ध्यान मत दिया करो। मैं तुमको शीघ्र ही शुक्राचार्यजी के पुत्र शंडामर्क के पास पढ़ने भेजूंगा।

प्रहलाद—अच्छा पिताजी!

(हिरण्यकशिपु जाता है)

अंक पहला दृश्य तीसरा

स्थान—मार्ग ।

समय —प्रातःकाल ।

[देवर्षि नारदजी बीणा बजाते और गाते हुए नगर की ओर आ रहे हैं]

गीत नं० ३

माधव, मायापति, मधुसूदन !
जन-मन-रञ्जन, भव-भय-भंजन निखिलेश्वर, जीवनधन!
रोम-रोम में रमा हुआ है, तू मेरे मन मोहन ॥ माधव० ॥
सब जग में तेरा निवास है,
सुमनों में तेरा विकास है।
पूषण में प्रकाश है तेरा,
बन्धु-पिता-गुरु तू है मेरा, हे आनन्द निकेतन ॥ माधव० ॥
तू शशि है तो मैं चकोर हूँ,
तू घन है मैं नाथ ! मोर हूँ।
दया-प्रेम का तू आलय है,
तू प्रसन्न है, फिर क्या भय है ? हे करुणेश जनार्दन !
माधव, मायापति, मधुसूदन ॥

(दूसरी ओर से प्रहलाद और सुबोध आकर उन्हे प्रणाम करते हैं, नारदजी उन दोनों को आशीर्वाद देते हैं)

नारदजी—भगवान् के चरणों में तुम दोनों की अविचल भक्ति हो । (प्रहलाद से) राजकुमार का चित्त तो प्रसन्न है ?
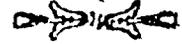
प्रहलाद–देवर्षि की कृपा से आनन्द है। महाराज ने इधर कैसे कृपा की?

नारदजी–पुत्र, हम तो नित्य इसी प्रकार हरि-कीर्त्तन करते हुए विचरते रहते हैं। जगदीश्वर के गुणानुवाद और देश-देशान्तरों में भ्रमण करना ही हमारे जीवन का एक मात्र लक्ष्य है। आज इस नगर में चले आये हैं, कल दूसरे में जा पहुँचेंगे।

प्रहलाद–भगवन्! जगदीश्वर तो मेरे पिता का नाम हैं, क्या आप उन्हीं के गुण गाते रहते हैं?

नारदजी–नारायण! नारायण! राजकुमार, तुमको यह अज्ञान कहाँ से आया? मैंने एक बार तुम्हारी माता कयाधु को उस समय भगवद्भक्ति की महिमा समझाई थी, जिस समय तुम उसके गर्भ में थे। आज मुझे तुमको फिर परमात्मा की भक्ति का उपदेश करना पड़ेगा।

सुबोध–महाराज, परमात्मा तो इन्हीं के पिता हैं। उन्होंने अपने समस्त साम्राज्य में यह आज्ञा प्रचलित करा दी है कि "जगदीश्वर हिरण्यकशिपु ही परब्रह्म परमात्मा हैं, वे अजर, अमर, अनादि और अनन्त हैं।" उन्होने अपने बाहुबल से त्रैलोक्य को विजय किया है। इन्द्र-सहित समस्त देवतागण उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। देव, दानव, नर नाग, गन्धर्व, किन्नर, सभी ने उनकी आधीनता स्वीकार कर ली है। ईश्वर, जगदीश्वर, परमेश्वर आदि उन्हीं के तो नाम हैं। वे अपने को अव्यक्त, अरूप और अनूप बतलाते हैं।
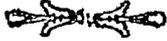
नारदजी—तुम दोनों बड़े मूर्ख हो, महान् अज्ञानी हो। हाड़, मांस और रक्त से बने हुए एक अनित्य पुरुष को परम पावन पुरुषोत्तम समझ रहे हो। उसके नाशवान् शरीर को अविनाशी जान रहे हो, और उसकी आसुरी शक्ति, उसके पशुबल का गुण-गान कर रहे हो।

अरे, तुम एक जल के विन्दु को सागर समझते हो।
महा जो धर्म-द्रोही है उसे ईश्वर समझते हो॥
कहाँ वह दैत्य अज्ञानी, कहां वह मोक्ष का दाता।
मरेगा जो बड़ी जल्दी, उसे अक्षर समझते हो॥

सुबोध—अच्छा महाराज, यदि प्रह्लाद के पिताजी ईश्वर नहीं हैं, तो ईश्वर कौन है? क्या आप किसी दूसरे को ईश्वर मानते है? आपके ईश्वर कहाँ रहते हैं? क्या करते हैं? क्या खाते हैं और क्या पीते हैं? वह कितने शक्ति-शाली हैं? क्या आप हमको उनके दर्शन करा सकते हैं?

न जब तक हम उन्हे देखें भला कैसे कहें ईश्वर।
कृपा करके करादो उनके दर्शन हमको हे मुनिवर॥

नारद जी—

जगत में जो कि बसते है, तथा जो सृष्टि-कर्त्ता है।
वही हैं सृष्टि के पालक, वही हरि जग के हर्त्ता हैं॥
उन्हीं का भक्तजन आनन्द से गुण-गान करते हैं।
धरा का क्लेश हरने को विविध अवतार धरते हैं॥
न खाने और पीने की उन्हें दरकार होती है।
उन्हीं के भजन से भक्तों की नौका पार होती है॥
उन्हीं की योग माया खेल हम सबको खिलाती है।
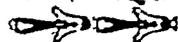
उन्हीं की शक्ति जग को नाच मनमाना नचाती है ।।
करोगे भक्ति जब उनकी तुम्हे दर्शन तभी होंगे ।
शरण में उनकी जाने पर रफा संकट सभी होंगे ।।

प्रह्लाद—महाराज, आपके सदुपदेश से मेरे हृदय मन्दिर में एक अपूर्व अनिर्वचनीय ज्ञान का प्रकाश होने लगा है । कृपा करके मुझे भक्ति के साधन बतलाइए । भक्ति किस प्रकार की जाती है ? और भक्ति के कितने भेद हैं, यह सब समझाइए ।

नारद जी—पुराणों में नवधा भक्ति का वर्णन मिलता है, अर्थात् भगवद्भक्ति नव प्रकार की होती है । मैं तुमको संक्षेप में समझाये देता हूँ । तुम दोनों ध्यानपूर्वक सुनो ।

(१) श्रवण—भगवान के चरित्र, महिमा, गुण और नाम को प्रेम पूर्वक नित्य सुनना ।

(२) कीर्त्तन—भगवान की लीला, कीर्त्ति, शक्ति, महिमा, गुण, नाम आदि का श्रद्धा-पूर्वक कीर्तन करना ।

(३) स्मरण—भगवान के नाम गुण. और स्वरूप का प्रीति-पूर्वक बारम्बार स्मरण करना ।

(४) पादसेवन—भगवान के जिस रूप की उपासना हो उसकी चरण-सेवा करना अथवा प्राणिमात्र में भगवान् को समझ कर सबकी चरण सेवा करना ।

(५) पूजन—भगवान की किसी भी मूर्त्ति की पूजा करना ।

(६) वन्दन—भगवान् की प्रतिमा को अथवा समस्त संसार को भगवान की प्रति मूर्त्ति समझ कर प्रणाम करना ।

(७) दास्य—भगवान को ही एक मात्र अपना स्वामी समझना,

और उन्हीं से समग्र प्राणियों की उद्भूति जानकर नित्य निष्काम भाव से सबकी सेवा करना।

(८) सख्य-भगवान् और संसार के प्रत्येक प्राणी को मित्रवत् समझना और उसी अनुसार आचरण करना, उन से निष्कपट भाव से प्रेम करना।

(९) आत्मनिवेदन-अहंकार रहित होकर अपना सर्वस्व भगवान् के समर्पण कर देना। इनका आश्रय लेने पर भगवद्दर्शन अवश्य होसकते हैं।

प्रहलाद—भगवन्! अब मुझे अपने पूर्व संस्कारों का स्मरण हो रहा है। कृपया भगवत्प्राप्ति के कुछ और साधन भी बतलाइए तथा भगवत्प्रेमियों के गुणों का उल्लेख कीजिए।

नारद जी-भगवत्प्राप्ति के और भी बहुत से साधन हैं। कुछ साधनों का नामोल्लेख मात्र करता हूँ। धृति, क्षमा, मनोनिग्रह अस्तेय शौच, इन्द्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या सत्य और अक्रोध इनदश उपायोंके अवलम्बसे भी भगवान के दर्शन होसकते हैं। अहिंसा सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पांच यमों, शौच, सन्तोष तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान इन नियमों तथा आसन- प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा ध्यान और समाधि इन साधनों से भी भगवान् मिलते हैं। इनके अतिरिक्त भगवत्प्राप्ति के मुख्य मुख्य साधन ये भी हैं- सत्संग भजन, सेवा भाव, दया ध्यान दैन्य उपकार सन्ध्या, पूजा सात्विक यज्ञ दान, तप, संयम, साधना
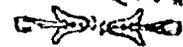
और सब धर्मों को छोड़कर केवल एक भगवान् की ही शरण में जाना।

भक्त को काम, क्रोध, लोभ, मोह अहंकार मद, मत्सर, दम्भ आदि अवगुण से दूर रहना चाहिए। अहिंसा परोपकार सहिष्णुता दृढ़ता वीरता क्षमा, दया, निराशक्ति, अभय, स्वावम्बन आदि गुणों को अपनाना चाहिए। धर्म के पथ से लाख विघ्न-बाधाओं के पड़ने पर भी न हटना चाहिए, अधर्मी और अत्याचारी से कभी नहीं डरना चाहिए, कष्टों से घबड़ाना नहीं चाहिये सुख-दुःख, शीतोष्ण, मान-अपमान, निन्दा-स्तुति, लाभ-हानि. जय-पराजय, राग-द्वेष आदि द्वन्द्वों से रहित होना चाहिए अर्थात् इन दोनों में समान भाव रखना चाहिए। किसी को सताना नहीं चाहिए और यश तथा फल की इच्छा से सर्वथा रहित होकर भगवद्भक्ति तथा लोकोपकार करना चाहिए

प्रह्लाद—आपके उपदेश से मेरा अज्ञान नष्ट होगया है-भूला हुआ मार्ग मिल गया है। मैं अब भगवान् का भक्त बनने का प्रयत्न करूँगा। इस शुभ कार्य में यदि मुझे पिताजी का भी विरोध करना पड़े तो भी पीछे नहीं हटूँगा।

नारदजी—वत्स, तुम्हारा कल्याण हो। भगवान तुम्हारी सहायता करें। अब मैं दूसरी तरफ जाता हूं।

[नारद आगे बढ़ते हैं, प्रह्लाद और सुबोध उन्हें प्रणाम करते हैं।]

(पर्दा गिरता है।)

अंक पहला   दृश्य चौथा

स्थान—दरबारीलाल का मकान।

समय—दोपहर।

[दरबारीलाल और सुमति बैठे हुए बातें कर रहे हैं।]

दरबारीलाल-संसार में स्वार्थ का बोलबाला है। स्वार्थ सब जगह ईश्वर की तरह व्यापक है, स्वार्थ सर्व शिरोमणि है। स्वार्थ से बढ़ कर कोई दूसरी वस्तु संसारमें नहीं है। परन्तु तुम मेरी स्त्री होकर भी स्वार्थ का महत्त्व नहीं समझती परमार्थ का गुण गाती हो।

सुमति-स्वार्थ के दास परमार्थ की महत्ता क्या समझ सकते हैं? परमार्थ देवता है तो स्वार्थ राक्षस है, परमार्थ यदि राजा है तो स्वार्थ एक गुलाम से भी बदतर है। परमार्थ पुण्य का सन्मार्ग, मोक्ष का द्वार और परमानन्द का आगार है। इसके विपरीत 'स्वार्थ, पाप की अन्धकार पूर्ण, गुफा, नरक का दरवाजा और काम, क्रोध, लोभ, मोह, द्वेष, दम्भ, विषमता आदि भयानक दुर्गुणों का भण्डार है। स्वार्थ के कारण ही मनुष्य मनुष्य का वैरी बन जाता है भाई भाई के गले पर छुरी चलाता है, पुत्र पिता को आँखें दिखलाता है, और मित्र-मित्र में भीषण युद्ध ठन जाता है—

स्वार्थ-ग्रस्त होकर नर जग में करते हैं अगणित दुष्कृत्य।
धर्म और कर्त्तव्य छोड़कर, बनजाते हैं अघ के भृत्य॥
वैर तथा भीषण अशान्ति का एक स्वार्थ है निर्माता।
महा रोग है यह पृथ्वी पर, क्लेश और दुख का दाता॥

दर०—अरी बाउली ! क्या बकती है ? तेरी मति किसने मारी।
स्वार्थ सकल दुःखों को हरता, और सदा है सुखकारी॥
स्वार्थ देव ही की महिमा से दरबारी है दरबारी।
स्वार्थ सभी का इष्ट देव है, क्या नर हो अथवा नारी॥
सु०—भूल रहे हैं आप कृपानिधि ! स्वार्थ गरल बरसाता है।
भीषण रोगों के कीड़ों को यह जग में फैलाता है॥
अत्याचार-अनीति-आदि से इसका पक्का नाता है।
एतदर्थ मुझको विस्मय है, यह सबको क्यों भाता है॥
जिनपर होती कृपा राम की वे इससे बच पाते हैं।
कोटि कोटि मानव इससे ही घिरे हुए दिखलाते हैं॥
दर०—अरी परमार्थ की बच्ची ! तेरी बुद्धि अभी तक कच्ची है। सच्ची बात तो यह है कि स्वार्थ रूपी बैल के बिना गृहस्थी रूपिणी गाड़ी चल ही नहीं सकती। मानव जीवन स्वार्थ रूपी अमृत से परिप्लाबित हो रहा है। मनुष्य जाति का कोई भी कार्य स्वार्थ से खाली नहीं है। माता अपनी सन्तान को स्वार्थों के लिए ही पाल-पोस कर बड़ा करती है, पिता अपने पुत्रों को स्वार्थ के लिए ही पढ़ाता-लिखाता है और योग्य बनाता है। स्त्री अपने पति से स्वार्थ के लिए ही प्रेम करती है, पति भी स्वार्थ के लिए ही अपनी भार्या को भोजन वस्त्र और अलंकार देकर प्रसन्न रखता है। राजा और प्रजा का सम्बन्ध भी स्वार्थ के लिए है, भक्त और भगवान का नाता भी स्वार्थ के कारण है, भक्त भगवान से धर्म अर्थ काम और मोक्ष इन चारों पदार्थों में से कोई न कोई पदार्थ अवश्य
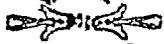
मांगता है, भगवान भी भक्ति के भूखे रहते है, यहां भी तो एक प्रकार का स्वार्थ ही है। वेश्या अपने प्रेमी के सामने स्वार्थ-वश ही तो प्रणय का नाटक दिखलाती है। साराँश यह है कि क्या राजा क्या प्रजा, क्या अमीर और क्या फकीर क्या स्त्री क्या पुरुष, क्या पुत्र और क्या पिता, क्या भक्त क्या भगवान, सभी छोटे-बड़े स्वार्थ देवता की किसी न किसी रूप में उपासना करतेहैं हम भी महाराज हिरण्यकशिपुको स्वार्थ के कारण जगदीश कहते है, रात-दिन उसके गुण गाते हैं, नित्य उसी की जय मनाते हैं। तू भी परमार्थ के पचड़े को परित्याग कर दे, और स्वार्थ के परम प्रशस्त पथ पर प्रवीणता पूर्वक पदार्पण कर इसी में तेरा कल्याण है।

सुमति—नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। स्वार्थ का पुजारी परमार्थ-पथ के अनिर्वचनीय आनन्द रस का स्वाद क्या जाने ? वह इसके दिव्य स्वरूप की महिमा किस प्रकार बखाने ? जो महामना हैं, जो उदार हृदय सज्जन हैं, जिनको परमार्थ तत्त्व का ज्ञान है और जिनको भले बुरे की पहचान है वे महानुभाव स्वार्थ रूपी मायावी राक्षस से कोसों दूर रहते हैं। ऐसे ज्ञाननिष्ठ सज्जनो के समस्त कार्य निःस्वार्थ भाव से पूर्ण होते हैं। भगवान के सच्चे भक्त भगवान की उपासना सदा निष्काम भाव से करते हैं। वे कभी किसी फल की—किसी पदार्थ की कामना नहीं करते। भक्ति के सामने मोक्ष रूपिणी दासी तो सदैव

हाथ जोड़े हुए खड़ी रहती है। परन्तु भक्त लोग अपनी भक्ति महारानी को छोड़ कर मोक्ष पर दृष्टि भी नहीं डालते। निश्चय ही उन मनुष्यों की बुद्धि पर घोर अज्ञान का पर्दा पड़ा हुआ है, जो भक्त और भगवान् के पवित्र सम्बन्ध को भी स्वार्थमय समझते हैं। परमार्थ के प्रकाश में ही उन लोगों को भक्त और भगवान् का यथार्थ स्वरूप दिखलाई दे सकता है।

[सुबोध का प्रवेश]

सुबोध—माता जी! आपका कथन अक्षरशः सत्य है।

दरबारी०—(झुंझला कर) चुप रह, सत्य के बच्चे! किस मूर्ख ने तुम दोनों मा-बेटे का नाम सुमति और सुबोध रक्खा था?

सुबोध—पिता जी! माता जी का नामकरण करने वाले महात्मा का नाम तो मैं नहीं जानता, परन्तु मेरा नाम किसने रक्खा था यह अवश्य बतला सकता हूँ। वह हैं आपही के गुरुदेव। लम्बी जटाओं और घनी दाढ़ी-मूँछ वाले एक ब्राह्मण। देखने से तो वे मूर्ख नहीं मालूम होते।

दरबारी०—(डपट कर) चुप रह, मूर्ख! गुरुदेव की शान में ऐसे शब्द! यदि फिर कभी ऐसी बात मुँह से निकाली तो बेंतों से खबर लूंगा।

सुबोध—शान्त! पिता जी शान्त! मुझसे भूल हुई, अपराध क्षमा कीजिए।

दरबारी०—(ऐंठते हुए) अच्छा जा, हम तुझको क्षमा किये देते हैं। भविष्य में मेरी इच्छा के विरुद्ध कोई शब्द
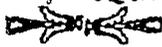
मुख से निकालने का साहस न करना। और अपनी इस मूर्खा माता की शिक्षा के अनुसार कभी मत चलना। मेरे इस सदुपदेश को कभी मत भुलाना—'

गीत नं० ४

स्वार्थ की ही जय मनाओ।
स्वार्थ का ही राग गाओ॥
स्वार्थ सबका प्राण-प्यारा।
स्वार्थ जीवन का सहारा॥
स्वार्थ की पूजा करो तुम, स्वार्थ पर तन-मन चढ़ाओ।
स्वार्थ की ही जय मनाओ॥
स्वार्थ की पतवार लेकर।
स्वार्थ-बल से नाव खेकर॥
दुःख-नद से पार होकर, खूब खेलो, खिल खिलाओ।
स्वार्थ का ही राग गाओ॥

(पर्दा गिरता है)

अंक पहला — दृश्य पाँचवा

स्थान—दैत्यराज हिरण्यकशिपु का विलास-भवन।

समय—रात्रि।

[सुरा और सुन्दरियों का दौरदौरा।]

हिरण्य०—(एक सुन्दरी के हाथ से सुरा का पात्र लेकर) क्या देवताओं के भाग्य में इसका स्वाद नहीं बदा। यह वह वस्तु है, जो वृद्ध को भी तरुण बना देती है। यह वह चीज है, जो निर्बल से निर्बल हृदय वाले

तन-मन-धन सर्वस्व इनकी भेंट करो, ये तुम्हारा कल्याण करेंगे। अज्ञान के अन्धकार से निकलकर उस ज्ञानालोक में जाओ जहां त्रैलोक्य के समस्त उपभोग्य पदार्थ प्राप्य हैं जहाँ चारों ओर सुख ही सुख है, दुःख नाम-मात्र को भी नहीं। किसी प्रकार का भी शोक मत करो। ईश्वर सब भूतों में स्थित है, वह सर्वव्यापक है, सब कुछ ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं। सब धर्मों को छोड़ कर इस ज्ञान को मत भूलो। इन भगवान की शरण में आओ। ये तुम्हारे समस्त पापों और तापों को क्षणमात्र में हर लेंगे। इनके शरीर स्पर्श से अपने शरीर को पवित्र करो। भगवान के लिए कर्म करने में किसी प्रकार का संशय या भ्रम मत करो। क्योंकि भ्रम और सन्देह ये दोनों कर्म-मार्ग के विघ्न हैं।

एक ललना-(क्रोध-पूर्वक) चुप रह कमीने कुत्ते। तू उस नकली ईश्वर के टुकड़े खाकर अपना पेट भरता है। तू यदि ऐसा न कहेगा तो कहां रहेगा। दुष्ट ! तूने ही इसकी आज्ञा से पहले हमारा बल-पूर्वक अपहरण किया, और अब हमको बातों से फुसला कर हमारा धर्म नष्ट कराना चाहता है। रहने दे अपना यह ज्ञानोपदेश अपने ही लिए, अपनी स्त्री के लिए। इस पाखण्डी नकली जगदीश्वर की उपासना से तू अपने शरीर को ही पवित्र रख। यह तुझ जैसे दुर्बुद्धि वाले स्वार्थियों या अन्ध भक्तों का ही कल्याण कर सकता है। तेरे
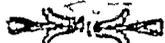
इस जगन्नाथ और इसके भोगैश्वर्य के प्रति हम सब घृणा का प्रदर्शन करती हैं। उसको ठुकराती हैं।

हिरण्य०—(अत्यन्त क्रोध से सिंहासन पर पैर पटक कर भयंकर !

[उसको क्रोधित देखकर भयंकर और गाने वाली सुन्दरियाँ भयभीत होकर काँपने लगती हैं।]

भयंकर—(कांपते हुए नत मस्तक और करबद्ध होकर) अन्नदाता जगदीश्वर की क्या आज्ञा है ?

हिरण्य०—इन नास्तिक स्त्रियों को ले जाओ, और कोड़ों से मार कर इनकी बुद्धि ठिकाने करो। जब तक ये मेरे में विश्वास न करें, और मुझको प्रीति पूर्वक आत्म-समर्पण करने के लिए तत्पर न हों तब तक अविराम रूपसे इनके नग्नशरीरपर कोड़े पड़ते रहें। मेरे ईश्वरत्व के विषय में शंका और सन्देह करने का यही समुचित दण्ड है।

भयंकर—दयानाथ के वचन यथार्थ हैं। मैं अभी दो घण्टे में इन छोकरियों की बुद्धि के अजीर्ण को अपनी मार की चटपटी और मजेदार छटनी से दूर किये देता हूँ।

[चारों बालाओं को पकड़ कर खींचता हुआ लेजाने लगता है।]

हिरण्य०—और सुनो।

(भयंकर रुक जाता है।)

यदि ये मार से भी ठीक न हो तो शूली पर चढ़ा दी जाँय।

भयंकर—(हाथ जोड़ कर) जो आज्ञा ! जगदीश्वर श्री हिरण्य-
कशिपु की जय हो।

[स्त्रियों को बल-पूर्वक घसीटता हुआ ले जाता है।]
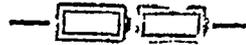
अंक पहला दृश्य छठवां

स्थान—राजमहल।

समय—प्रभात।

प्रह्लाद अपने कमरे में बैठा हुआ, भगवान की आराधना कर रहा है। उसके समक्ष भगवान विष्णु का एक सुन्दर दिव्य चित्र रक्खा हुआ है। उसका विधिवत् पूजन करता हुआ वह भावना-निमग्न हो जाता है और गद्गद कंठ से भगवान् की स्तुति करता है।]

❀ स्तुति ❀

गीत नं० ६

हरे ! हर लो समस्त अज्ञान।
अपने भक्ति-भाव से भर दो मन मेरा भगवान !
नाथ ! तुम्हारे चरण-कमल का, रहे सर्वदा ध्यान ।।
रोम रोम हुलस उठे तुम्हारी लख कर यह मुसकान।
सब भूतों में यही तुम्हारी देखूं छवि छबिमान ।।
शक्ति और साहस दो भगवन ! करिए अभय प्रदान।
सत्य-मार्ग पर सर्वेश्वर ! मैं हो जाऊँ बलिदान ।।

प्रह्लाद भगवान् की स्तुति करते हुए तन्मय होजाता है

अङ्क पहला
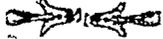
[इसी समय हिरण्यकशिपु, वज्रमूर्त्ति, रक्तलोचन, विकटानन और दुर्दान्त के साथ आता है।]

दुर्दान्त-(कुछ आगे बढ़ कर) दयानिधान! इसी कमरे में राजकुमार विष्णु की पूजा कई दिन से करते रहते हैं। विष्णु का एक चित्र रख लिया है, उस पर कभी जल डालते हैं। कभी चन्दन और चांवल चढ़ाते है, कभी उस पर पुष्प बरसाते हैं, कभी दीपक जला कर उसे दिखलाते हैं, कभी थाली भर कर अनेक प्रकार का भोजन उसके सामने रख देते हैं। और कभी हँसते हैं तो कभी रोते हैं कभी उसके सामने नाचने लगते हैं तो कभी गाने बजाने लगते हैं। कभी-कभी काँपने भी लगते हैं, कभी-कभी उनके चेहरे का रङ्ग भी बदलने लगता है, और कभी-कभी वे बिल्कुल निष्क्रिय होकर चेतनाशून्य भी होजाते हैं।

एक सप्ताह से मैं राजकुमार का यह पागलपन बराबर देख रहा हूँ। आज बड़ा साहस करके अन्नदाता तक समाचार पहुँचाया है।

[हिरण्यकशिपु अपने अधिकारियों सहित प्रह्लाद के समीप पहुँच कर उसे बुलाता है जब वह नहीं सुनता तो उसका हाथ पकड़ कर झटके के साथ उसे खड़ा कर देता है]

हिरण्यकशिपु-प्रह्लाद! यह तुम क्या ढोंग रचा करते हो?

प्रह्लाद-पिताजी! दुःख है कि जगत-पिता परमेश्वर की पूजा को आप ढोंग समझते हैं।
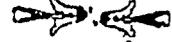
हिरण्य०—कौन जगत-पिता ? जगत पिता तो साक्षात् मैं हूँ, परमेश्वर मैं हूँ। फिर तुम मेरी सेवा छोड़कर इस तस्वीर के साथ क्या खिलवाड़ किया करते हो? अब तुम बच्चे नहीं रहे, पढ़ने-लिखने में चित्त लगाओ। इस पागलपन को छोड़ो। यह मेरे पुत्र को शोभा नहीं देता।

प्रह्लाद-पिताजी, यह पागलपन नहीं है। भगवान विष्णु की पूजा-सेवा करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। चाहे वह राजा हो या रङ्क, स्त्री हो या पुरुष और वृद्ध हो या बालक। भगवान सबके स्वामी हैं, सबके पिता हैं सब जगत् के संचालक और नियन्ता हैं। वह तुम्हारे भी अधीश्वर हैं, और तुम्हारे भी पिता।

हिरण्य०—(क्रोध-पूर्वक) बदमाश, जाति-द्रोही, पितृद्रोही मेरे परम शत्रु विष्णु की आराधना करके तू मेरे क्रोधानल में भस्म हुए बिना न रहेगा। जानता नहीं इसी विष्णु ने जिसकी पूजा का ढोंग तू रचा करता है, मेरे भाई हिरण्याक्ष का प्राण-नाश किया था। भविष्य में मैं तेरे मुख से अपने महा बैरी का नाम कभी नहीं सुनूं। यदि मेरी आज्ञा का उल्लंघन करेगा तो अपनी तलवार से तेरा सिर धड़ से अलग कर दूंगा।

प्रह्लाद—पिताजी, आप मुझे चाहे जो दण्ड दे सकते हैं, परन्तु मैं भगवान विष्णु की भक्ति से पराङ्मुख नहीं हो सकता। भगवान तो समदर्शी हैं। उनकी

कोई भी शत्रु और मित्र नहीं है । वह केवल भक्ति से प्रसन्न होते हैं। इसलिए मैं आपसे बिनम्र भाव से प्रार्थना करता हूँ कि भगवान से वैर छोड़कर उनकी उपासना कीजिए । उनकी शरण में जाइए। वे बड़े दयालु हैं, तुम्हारे समस्त अपराधों को क्षमा कर देंगे।

हिरण्य०—(अत्यन्त क्रोधित होकर कल का छोकड़ा हमको उपदेश देता है। तुझ जैसी अयोग्य सन्तान का मैं मुख नहीं देखना चाहता । अभी तेरे शरीर के दो टुकड़े किये देता हूँ।

[तलवार खींच कर प्रहलाद पर भरपूर वार करता है। तलवार उसके शरीर पर लग कर तीन टुकड़े हो जाती है। दो टुकड़े पृथ्वी पर गिर कर चूर-चूर हो जाते हैं, और खाली मूंठ हिरण्यकशिपु के हाथ में रह जाती है । प्रहलाद मुस्कराता है, उस पर आकाश से सुमन-वृष्टि होती है। हिरण्यकशिपु और उसके साथी विस्मित होते हैं । इसी समय पर्दा गिरता है]

❀ ड्राप सीन ❀
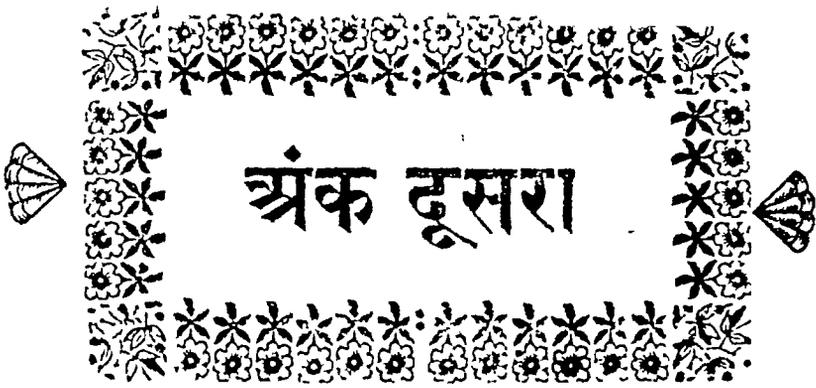
अंक दूसरा

दृश्य पहला ।

स्थान—अन्तःपुर ।

[महारानी बीणा बजाती हुई गा रही हैं]

गीत नं० ७

प्रेम से जग में बड़ौ न कोय ॥
प्रेमामृत कौ पान करै ते दिन दूनो सुख होय ॥
सारी प्रकृति सुनावति हमको, नित्य प्रेम-सन्देश ।
पूत प्रेम ही धर्म हमारो, प्रेम हमारो देश ॥
एक प्रेम को प्राप्त करो तुम तन मन धन सब खोय ।
प्रेम से जग में बड़ौ न कोय ॥

[हिरण्यकशिपु दरबारीलाल और रक्तलोचन आते हैं]

हिरण्य०—मन्त्रीजी ! ऐसे नालायक लड़के को जीवित रहने देना मैं उचित नहीं समझता । जिस प्रकार भी हो उसका प्राणान्त होना ही चाहिए ।
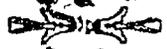
रक्त लो०–जगदीश कुछ शान्ति से विचार करेंगे। अपनी सन्तान की हत्या करना उचित नहीं है। मैं समझता हूँ यही महारानी की राय होगी।

महारानी–मन्त्री जी की बात सब प्रकार से माननीय है। महाराज को अपने अबोध बालक पर दया करनी ही चाहिए। मै प्रह्लाद के प्राणों की भीख महाराज से मांगती हूँ। आशा है, महाराज मुझे निराश नहीं करेंगे।

[घुटने टेक कर अंचल फैलाती है]

हिरण्य०–तुम्हारे कहने से मैं उसको इस समय क्षमा किये देता हूं। [रक्त लोचन से] परन्तु मन्त्री जी उसकी शिक्षा का यथोचित प्रबन्ध होना चाहिए।

रक्त लोचन–मैं राजकुमार को शंडामर्क की पाठशाला में पढ़ने बिठलाये देता हूं।

हिरण्य०–ठीक है। उससे कह दीजिए कि वह मेरे पुत्र को मेरे कुल के अनुरूप ही शिक्षा दें। साम, दाम, दण्ड, भेद राजनीति के इन चारों अंगो को भली भाँति समझा दें। अर्थ और काम इन दोनो पदार्थों का विस्तार पूर्वक अध्ययन करावे। और उससे कह दीजिए कि धर्म और मोक्ष का नाम ले यदि प्रह्लाद विष्णु का नाम अपने मुख से निकाले तो उसको खूब पीटे।

दरबारी—सरकार के वचन यथार्थ हैं। बड़े ही सुन्दर हैं। यदि जगन्नाथ की आज्ञा हो तो मैं भी अपने नालायक बेटे सुबोध को राजकुमार के साथ योग्य बनने भेजूं।

हिरण्य०–तुम भी सहर्ष उसे शंडामर्क के पास पढ़ने भेज सकते हो।

दरबारी०–[खुश होकर] अन्नदाता की जय हो।

[रक्त लोचन और दरबारी लाल अभिवादन करके जाते हैं]

हिरण्य०–(महारानी के पास एक कुरसी पर बैठते हुए) महारानी ! तुम्हारे अनुरोध से मैंने तुम्हारे पुत्र को क्षमा कर तो दिया है, परन्तु यदि उसकी आदतों का शीघ्र ही सुधार नहीं हुआ तो वह दिन दूर नहीं होगा कि तुमको उसकी जुदाई में आँसू बहाने पड़ेंगे। एक न एक दिन तुमको उसके महा-वियोग का घोर दुःख सहना ही पड़ेगा।

महारानी–महाराज ! ऐसे अनिष्टकारी अप्रिय शब्द कहकर मुझ अबला के हृदय को न दुखाइए प्रह्लाद आपको अत्यन्त प्रिय था, वह आपके नेत्रों का तारा था। आज उसी का अमंगल आप सोच रहे हैं। क्या पिता का अपने पुत्र के प्रति यही कर्त्तव्य है ? दया कीजिए स्वामिन् ! दया मनुष्यों का भूषण है।

हिरण्य०–महारानी, भूल रही हो। हमारे भूषण पुरुषार्थ, तेज और वीरत्व है। 'दया, शब्द को तो हमने अपने कोष से ही निकाल दिया है। 'दया, कुछ नहीं है। केवल नारि जाति के निःशक्त हृदय की दुर्बलता है। कमजोरो का मानसिक विकार है, उनके रोगी मस्तिष्कों की उपज मात्र है। यदि हम लोग दया करने लगें तो समस्त राज्य-व्यवस्था ही बिगड़ जाय। कोई
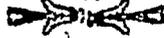
हमारा आतङ्क न माने और बारम्बार हमको कर्त्तव्य च्युत होना पड़े।

महारानी—जगदीश्वर के मुखारविन्द से ऐसे शब्द सुनकर मुझे विशेष आश्चर्य तो नहीं होता, परन्तु यह अवश्य कहूँगी कि संसार में दया और प्रेम से बढ़कर कोई तीसरी वस्तु नहीं है। जगन्नाथ दया और प्रेम के महत्व से अनभिज्ञ है, उसकी शक्ति से अभी तक अपरिचित हैं।

हिरण्य०—महारानी! इस अप्रिय चर्चा को छोड़ कर एक सुन्दर गीत सुनाओ।

महारानी—[नम्रता और निराशा मिश्रित शब्दों में] जैसी आज्ञा मेरे नाथ की।

[वीणा के तारों को ठीक कर के गाती है]

गीत नं० ८

प्रेम का ही राग गाऊँ।
प्रेम की वीणा बजाऊँ॥
प्रेम की ही जय मनाऊँ।
प्रेम पर तन मन चढ़ाऊँ।
प्रेम मेरा प्राण-प्यारा।
प्रेम जीवन का सहारा।
प्रेम के पथ में कमल से मैं चरण आगे बढ़ाऊँ।
प्रेम का ही राग गाऊँ॥
ध्येय मेरा एक ही है-प्रेम की पूजा करूँ मैं।
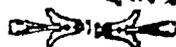
प्रेम में कांटे अगर हों मैं पलक उन पर बिछाऊँ ।
प्रेम का ही राग गाऊँ ।

हिरण्य०—(अप्रसन्न होकर) बन्द करो, अपने इस प्रेम के तराने को। इस स्वर-ताल-रहित बेहूदे गाने को। कांटो पर पलक बिछाना वीरो का काम नहीं है। हां, हम जैसे वीर कॉटो का नामोनिशान अपनी दुधारी तलवार से मिटा कर अपना मार्ग अवश्य साफ़ कर सकते हैं।

[तलवार हिलाता हुआ जाता है]
पर्दा बदलता है ।

अङ्क दूसरा दृश्य दूसरा

स्थान—पाठशाला।

[शंडामर्क एक उच्चासन पर बैठे हुए लड़को को पढ़ा रहे हैं]

शंडामर्क—संसार में जब तक जीवन है, तब तक अपने सुख की साधना करना प्रत्येक प्राणी का परम कर्त्तव्य है। जीवन का उद्देश्य यही है कि आनन्द-पूर्वक समय व्यतीत हो। धन और जन के लिये ही तन मन लगाया जाता है। जिस जीवधारी का जीवन दुःखमय है, जिसने आनन्द का उपभोग नहीं किया, वह सचमुच पृथ्वी के लिए भार स्वरूप है। वह जीवन ही क्या जिसने कभी मस्त होकर आनन्द-क्रीड़ा नही की, सुरा और सौन्दर्य की रंगरेलियां नहीं देखी।

वह राजा ही क्या जिसने नीति अथवा अनीति से अपने राज्य की सीमा नहीं बढ़ाई और वह बलवान ही क्या जिसने अपने शत्रुओं के मस्तक अपने पैरों से नहीं ठुकराये। इसलिए तुम सबको मैं यही शिक्षा देता हूँ कि आनन्द और सुख की प्राप्ति के लिए तुम लोग विद्या प्राप्त करो।

एक लड़का—महाराज ! तो क्या मनुष्य-जीवन का चरम लक्ष्य केवल सुख की प्राप्ति ही है ?

दूसरा लड़का—क्या सुख से बढ़ कर, कोई दूसरा पदार्थ नहीं है ?

शंडामर्क—प्यारे बालको ! तुम लोगों को यह स्मरण रखना चाहिए कि संसार का प्रत्येक प्राणी सुख का इच्छुक है और सुख की खोज में ही सब लोग बेचैन हैं। हमारा खाना पीना, सोना-बैठना, चलना-फिरना, लिखना-पढ़ना, आदि प्रत्येक कार्य सुख-प्राप्ति के साधन मात्र हैं। जो मनुष्य अपने को सुखी नहीं बना सकते, उनका जीवन भी क्या कोई जीवन है। वस्तुतः जो लोग सुख से वञ्चित हैं वे अभागे हैं, अकर्मण्य हैं. दुखी मनुष्यों का अस्तित्व ही क्या ? वे नारकीय कीड़े हैं। उनको अपने जीवन की अभिलाषा न करके अपनी मृत्यु का आह्वान करना चाहिए।

तीसरा लड़का—महाराज ! जो लोग दुखी और दुर्बल हैं, धन और अन्न के अभाव में जो अपने जीवन की घड़ियाँ कठिनाई के साथ व्यतीत कर रहे हैं, उन लोगों के साथ सुखी और सम्पन्न मनुष्यों को कैसा
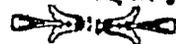
व्यवहार करना चाहिये, दीनों की सहायता करना धनवानों का कर्तव्य है या नहीं ?

शंडामर्क—भूलते हो बच्चे ! तुम्हारा जीवन किसी की सेवा और सहायता के लिए नहीं है। जो दुर्बल हैं, जिनमें अपने पैरों पर खड़े होने की शक्ति नहीं है, जो लोग दूसरों की सहायता की बाट देखा करते हैं, और हरेक कार्य में ईश्वर की सहायता चाहते हैं, इन लोगों को हाथ का सहारा देने की कोई आवश्यकता नहीं। ऐसे कमजोर जीवों को भरपूर धक्का देकर ऐसा गिरा देना चाहिए कि फिर कभी वे लोग उठने का साहस न करें और सुखी प्राणियों से सहायता की याचना करके उनके मार्ग में रोड़े न अटकावें।

चौथा लड़का—तब तो गुरुदेव का यह आशय है कि दुखी प्राणियों का अन्त करके संसार से दुःख का अन्त कर दिया जाय।

पांचवां लड़का—(हंसते हुए) रोग के पूर्व ही रोगी का नाम मिटा देने का उपाय तो अच्छा है।

छठवां लड़का—तो क्या हम लोग यह समझें कि संसार में दुःख को दूर करने का इससे उत्तम कोई अन्य साधन नहीं है ?

शंडामर्क—जगन्नाथ हिरण्यकशिपु के साम्राज्य में मैं तो इससे श्रेष्ठ कोई दूसरा साधन नहीं देखता। अच्छा, तुम लोग जाकर अपना पाठ याद करो। और प्राथमिक श्रेणी के छात्रों को पाठ सुनाने के लिए भेजो।

[बड़े-बड़े सब लड़के जाते हैं, और छोटी अवस्था के
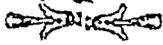
[छात्र अपनी-अपनी पुस्तकें लेकर पाठ सुनाने आते हैं]

एक छात्र—(अपना पाठ सुनाता है।)

त्रिलोकीनाथ हिरण्यकशिपु का वैभव संसार में सबसे बढ़ कर है। उनका तेज और प्रताप सूर्य से भी अधिक उग्र है। समस्त नर, किन्नर और सुर तथा नाग, यक्ष और दानव उनके आधीन हैं। वे परम पवित्र हैं, महान शक्तिशाली हैं। देवेन्द्र भी उनकी अपार शक्ति को देखकर डरते हैं। हिरण्यकशिपु अजर अमर और अनन्त हैं। इसलिए हम सबको उनका भक्त बनना चाहिये।

[दूसरा छात्र अपना पाठ सुनाता है।]

अपने सुख के लिए जिओ और सुख के लिए ही मरो। अपने राजा की अनुचित आज्ञा का भी पालन करना चाहिए। जगन्नाथ हिरण्यकशिपु को भक्ति-पूर्वक अपना तन, मन और धन भेंट करो। जो उनसे द्रोह करेगा, वह सौ कल्प तक महा रौरव नरक में निवास करेगा। जगदीश्वर हिरण्यकशिपु के कोपानल से शङ्कर भी रक्षा नहीं कर सकते।

[तीसरा छात्र पाठ सुनाता है।]

अपने माता पिता की आज्ञा पालन करना चाहिए, परन्तु राजाज्ञा के समक्ष माता पिता की आज्ञा कोई मूल्य नहीं रखती। राजाज्ञा ही सर्वोपरि है। उसका पालन करना मनुष्य का प्रमुख धर्म और कर्त्तव्य है। यदि किसी का वृद्ध पिता अपने पुत्र को महाराजाधिराज हिरण्यकशिपुकी आज्ञामाननेसे रोके तोऐसी दशा में पुत्र को चाहिए कि वह किसी प्रकार का संकोच न करते हुए उस बूढे बाप की गर्दन उतार कर राज-दरबार में उपस्थित हो।

अपने कर्तव्य पालन में दया और भावुकता को हटा देना चाहिये ।

[चौथा छात्र अपना पाठ सुनाता है ।]

दया, ममता स्नेह और परोपकार कर्त्तव्य पालन में बाधा डालते हुए, मनुष्य के सुख के मार्ग में रोड़े अटकाते हैं। हमारे लिए यह कोई जरूरी बात नहीं है कि हम लोग किसी शास्त्र के बचनों का पालन ही करें। वेद और स्मृतितों का युग गया। उपनिषदों के उपदेश से किसी को भी शान्ति नहीं मिल सकती शान्ति और सुख का जरिया केवल स्वार्थ की साधना है जबतक जीवन है तबतक स्वार्थ भी है। परमार्थ केवल कवियों की कल्पना मात्र है। वे लोग मूर्ख हैं जो यज्ञ, दान और तपमें अपना स्वर्ण सा जीवन मिट्टी कर देते है। अभिमान और कठोरता से अपने प्रभाव को सहज ही में बढ़ा सकता है।

ज्ञान और ध्यान, यह सब पुराने जमाने की बातें है। आज कल इसकी चर्चा भी राजद्रोह में शामिल है। क्षमा, शौच आस्तिक्य, शम, दम, तितिक्षा, त्याग तथा वैराग्य, ये सब सुख के मार्ग में विघ्नकारी हैं। इसलिए इन सब से बचा रहना चाहिए ।

[पाँचवाँ छात्र अपना पाठ सुनाता है।]

बचपन में पत्थर फेंक कर किसी का शिर फोड़ देना कोई अपराध नहीं है, किसी के घर में आग लगा देना भी दण्डनीय नही समझा जावेगा। और युवावस्था में रास्ता चलती हुई सुन्दरियों से छेड़छाड करना भी चरित्र सम्बन्धी कोई दोष नहीं माना जाएगा। ऐसे अपराधों की न्यायालयों में कोई सुनवाई नहीं होगी ।

[रक्तलोचन और प्रहलाद आते हैं ।]

शंडामर्क—आइए महामंत्रीजी, पधारिए। पधारिए राजकुमार, आप दोनो महानुभावों का स्वागत है ।

[दोनों बैठते हैं]

महामंत्री जी ने आज कैसे कष्ट किया ? क्या मेरे योग्य कोई कार्य है ?

रक्तलोचन–राजकुमार प्रहलाद की शिक्षा-दीक्षा का समस्त भार जनन्नाथ की आज्ञा के अनुसार आपको सौंपा जाता है। इनकी शिक्षा में लोई कमी न रहने पावे। इनके कुल के अनुकूल ही इनको शिक्षा दीजिए।

शंडामर्क–मैं बड़े प्रेम से जगन्नाथ की आज्ञा का पालन करूंगा । राजकुमार को बड़ी सावधानी के साथ शिक्षा दूंगा ।

रक्तलोचन–(खड़ा होकर) अच्छा तो अब मुझे आज्ञा है।

शंडामर्क–मै कैसे निवेदन करूं ।

[रक्तलोचन का प्रस्थान]

शंडामर्क–(प्रहलाद) राजकुमार, आज से तुम इस पाठशाला को अपना घर ही समझो। यहां तुम्हारे आराम का पूरा खयाल रक्खा जावेगा । परन्तु यह याद रखना कि पढ़ने-लिखने में कोई कमी न होने पावे। जिस दिन जो पाठ पढ़ाया जावे उसी दिन वह कंठस्थ करलेना चाहिए अगर पाठ याद करने में सुस्ती करोगे तो निश्चय ही मार खाओगे।

प्रहलाद–मैं गुरुदेव की आज्ञा का पालन करने का प्रयत्न करूं गा।

शंडामर्क–शाबाश! तुम को ऐसा ही करना चाहिए।
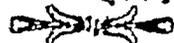
[दरबारीलाल और सुबोध आते हैं ।]

शंडामर्क–आइए सेठजी ! पधारिए ! आज कैसे भूल पड़े इधर । कहिए कुशल तो है ?

दरबारी–पण्डितजी ! आपका यह सेवक आपके पास पढ़ने आया है । इसका नाम तो सुबोध है, परन्तु बोध इसको कुछ देर में होता है । कृपा करके कुछ ऐसा बोध इसको कराइए कि स्वार्थ की साधना करे और परमार्थ की बातें भूल जाय ।

शंडामर्क–हाय सर्वनाश ! इस अल्पवायु में इसको परमार्थ का पाठ किसने पढ़ा दिया ।

दरबारी०–इसी की बुद्धिमती माताने, सुमति नाम्नी होने के कारण अपने को बुद्धि का ठेकेदार समझने लगी है । परन्तु वास्तव में उसकी समस्त सुमति का दिवाला निकल चुका है ।

शंडामर्क–अत्यन्त खेद के साथ कहना पड़ता है, क्षमा कीजिये महाशय, ऐसी माताएँ अपनी सन्तान का जीवन नष्ट कर देती हैं । ऐसी स्त्री को माता बनने का अधिकार ही नहीं होना चाहिए ।

दरबारी०–सच कहते है आप इसमें रत्ती भर भी झूठ नहीं है । मैं कल ही जगदीश्वर के दरबार में अपनी ओर से प्रस्ताव रक्खूँगा कि सुमति जैसी स्त्रियों से माता बनने का अधिकार छीन लिया जाए ।

सुबोध—तो मैं भी कल दरबार में पहुँच कर तुम्हारे इस प्रस्ताव का ज़ोरदार शब्दों में विरोध करूंगा ।

दरबारी–पंडित जी ! कल इस लड़के को कृपा करके कहीं न जाने
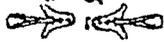
दीजिएगा। अगर ज्यादा शरारत करे तो कोठरी में बन्द कर दीजिएगा।

शंडामर्क—अच्छा महाशय!

दरबारीलाल—नमस्कार महाराज।

(प्रस्थान)

अंक दूसरा दृश्य तीसरा

स्थान—दरबारीलाल का मकान।

[सुमति एक आसन पर बैठी हुई कुछ सोच रही है।]

(स्वगत) पतिदेव को स्वार्थ की कुछ ऐसी धुन सवार हुई है कि सोते-उठते, खाते-पहनते, चलते-फिरते, सदैव, आठो याम, उसी का चिन्तन किया करते हैं। किसको किस तरह से फुसलाना चाहिए किस तरह से बहकाना चाहिए? दूसरों की दौलत किस प्रकार अपने घर में आ जाय? किस उपाय से दो करोड़ से दश करोड़ रुपया इकट्ठा हो जाय इन्हीं बातो को अहर्निशि सोचते रहना उनकी आदत हो गई है।

भाड़ में जाय ऐसी सम्पत्ति जिसके कारण चैन से खा और पी भी नहीं सकते। जो स्वयं अपने सुख और आराम का खयाल नहीं करता, वह दूसरों को क्या सुखी बना सकेगा।

ऐसे पुरुषों की स्त्रियों को जीवन का कोई भी आनन्द नहीं मिल सकता।

[दरबारीलाल प्रवेश करता है।]

दरबारी०—हम भी यह जानने के इच्छुक हैं कि हमारी श्रीमती
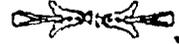
जी आज एकान्त में बैठ कर किस गूढ़ समस्या को हल करने का प्रयास कर रही हैं।

सुमति–कुछ नहीं, मैं तुम्हारा ही ध्यान कर रही थी। तुम्हारे गुणों का ही स्मरण कर रही थी।

दरबारी०–ज्ञात पड़ता है आज उठते ही किसी सौभाग्यशाली का मुँह देखा था, तभी तो श्रीमती जी मेरे गुणों का स्मरण और मेरे स्वरूप का ध्यान कर रही हैं। देवीजी यदि सत्य पूछना चाहें तो मैं निःसंकोच भाव से कहूँगा कि मेरा स्वरूप अवश्य ही आकर्षण शक्ति से पूर्ण है। कोई कैसी भी कठोर हृदया स्त्री हो मेरी ओर अवश्य ही आकर्षित हो जाती है। फिर तुम तो मेरी धर्म-पत्नी हो, तुम्हारा तो कहना ही क्या है?

सुमति–आप ऐसे ही गुणी हैं। कहिए, सुबोध को पढ़ने बिठला आये।

दरबारी०–आपकी आज्ञा का पालन करना तो परमावश्यक था। परन्तु.... ..... .

सुमति–कहिए, कहिए। रुक क्यों गए?

दरबारी०–पण्डित आपकी शिकायत कर रहा था।

सुमति–(आश्चर्य) मेरी शिकायत! कहिए, वह कैसी? मैंने क्या अपराध किया है?

दरबारी०–गुरुवर्य शुक्राचार्य जी के सुयोग्य पुत्र कहने लगे कि हाय! हाय सर्वनाश! सुबोध की माता ने अपने पुत्र को परमार्थ का पाठ पढ़ा कर उसका सर्वनाश कर दिया। बेचारे अबोध बालक का जीवन नष्ट
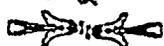
कर दिया। ऐसी स्त्री को तो माता बनने का अधिकार नहीं मिलना चाहिए।

सुमति-हिरण्यकशिपु का अन्न खाकर बेचारे शंडामर्क की बुद्धि भ्रष्ट हो गई, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मैं कहती हूँ कि ऐसे अयोग्य ब्राह्मण को गुरु बनने का अधिकार नहीं मिलना चाहिए। मैं आज ही महारानी की सेवा में उपस्थित होकर यह प्रार्थना करूँगी कि वह शीघ्र ही प्रह्लाद को उसकी पाठशाला से उठा लें। और आपको यह आज्ञा दी जाती है कि मेरे सुबोध के लिए कोई सुयोग्य शिक्षक शीघ्र ही खोजिए। मैं अभी शंडामर्क के पास से उसे उठाये लाती हूँ। ऐसे नालायक शिक्षक के पास भेजकर मैं अपने पुत्र का जीवन नष्ट नहीं करना चाहती।

दरबारी०-सुमति ! मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ। आवेश में आकर कहीं ऐसी मूर्खता न कर बैठना। तुम्हारे ऐसा करने पर मुझे बहुत ह लज्जित होना पड़ेगा। शंडामर्क बहुत ही योग्य आदमी हैं। प्रकाण्ड पंडित हैं। उनके समान विद्वान कोई भी नहीं है। वह ही मेरे पुत्र को मेरे वंश के अनुरूप शिक्षा दे सकते हैं। उनसे बढ़ कर गुरु सुबोध को कहीं नहीं मिलेगा। बाद में वे तुम्हारी प्रशंसा भी तो करने लगे थे।

सुमति-क्या प्रशंसा करने लगे थे ? जरा मैं भी तो सुनूँ।

दरबारी०-कहने लगे कि सुबोध की माता अवश्य ही बड़ी बुद्धिमती होंगी। उनको तो बुद्धि का ठेकेदार होना
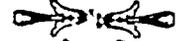
चाहिए। उन्हींके संसर्ग में रहने से सुबोध मेधावी मालूम होता है। वह सुन्दरी भी अवश्य होंगी, असाधारण सुन्दरी। परन्तु स्वभाव कुछ चञ्चल अवश्य होगा। मै उनसे बहुत प्रसन्न हूं। वे अटल सौभाग्यवती हो।

सुमति—तब तो शंडामर्क धुरन्धर ज्योतिषी भी जान पड़ते है।

दरबारी—अजी, वह समस्त विद्याओं के आगार हैं। सभ्यता और योग्यताके जीते जागते भाण्डार है। उनसे बढ़कर गुरु मिलना नितान्त असम्भव है।

सुमति—मैं तुम्हारी बात पर विश्वास करूं?

दरबारी—स्त्री को अपने पतिकी बात पर विश्वास करना ही चाहिए।

(पर्दा बदलता है)

अङ्क दूसरा दृश्य चौथा

स्थान—पाठशाला।

[लड़के पढ़ रहे हैं। शंडामर्क बाहर गए हुए हैं।]

१ लड़का—(पढ़ता है) हिरण्यकशिपु अजर, अमर और अनन्त हैं। वे जगन्नाथ हैं। अविनाशी, और अखिलेश्वर वे ही हैं।

२ लड़का—(पढ़ता है) खाना-पीना और आनन्द करना ही सब
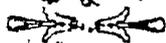
से बड़ा धर्म है। सुखी जीवन बिताना ही हम लोगों का प्रमुख लक्ष्य है।

३ लड़का—(पढ़ता है) अपने सुख के लिए यदि हमको किसी पर अन्याय और अत्याचार करना पड़े तो वह कोई पाप नहीं है। धनवान बनने के लिए यदि छल और बल का आश्रय लेना पड़े तो वह कोई अधर्म नहीं है।

४ लड़का—(पढ़ता है) दया और उपकार की पुकार करने वाले निर्बलों की किसी बात पर ध्यान नहीं देना चाहिए।

प्रह्लाद—(लड़कों से) भाइयो ! तुम सबको उल्टी शिक्षा दी जा रही है। तुम लोगों को विद्या रूपी प्रभाकर से बहुत दूर हटा कर, अज्ञान के घोर अन्धकार में ढकेला जा रहा है। पंचतत्वों से बने हुए एक भौतिक शरीरधारी को तुम लोग अजर, अमर और अखिलेश्वर समझ रहे हो। तुम्हारे मस्तिष्क में आसुरी गुणों को बल पूर्वक घुसेड़ा जा रहा है। दया और परोपकार जो कि धर्म के प्रमुख अङ्ग हैं उनकी उपेक्षा करना सिखलाया जा रहा है। छल और बल, अन्याय और अत्याचार का प्रयोग करने के लिये तुमको तयार किया जा रहा है। भाइयो ! सावधान होजाओ। अभी समय है। यह शिक्षा तुम्हारा शीघ्र ही सर्वनाश कर देगी। इस दास बनाने वाली शिक्षा का तुरन्त ही

परित्याग करदो। यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो शीघ्र ही तुम्हारी समस्त मानवीय वृत्तियों का क्षय हो जावेगा।

सुबोध–प्रहलाद भैया ठीक कहते हैं। तुम लोगों की बुद्धि पर इस कुशिक्षा का आवरण कौशल के साथ डाला जा रहा है। ऐसी शिक्षा, जो मनुष्य को राक्षस बना देती हैं, सर्वथा त्यागनीय है।

१ लड़का–तो क्या जगन्नाथ हिरण्यकशिपु ईश्वर नहीं हैं।

सुबोध–नहीं जैसे हम हैं, वैसे वह भी हैं। उन्होंने अपने होने का केवल एक ढोंग रच रक्खा है और बल प्रयोग द्वारा अपने ईश्वर होने का प्रचार कर रहे हैं।

२ लड़का–क्या खाना-पीना और आनन्द करना हम लोग का धर्म नहीं है ?

प्रहलाद–यह बातें तो हमारे दैनिक कृत्य का एक सामान्य अङ्ग हैं। यह धर्म कदापि नहीं कहला सकती। केवल अपने शरीर को सुख देने के लिये ही हम लोगों ने जन्म नहीं लिया है। हमको अपने कर्त्तव्य और धर्म का पालन करना चाहिए।

३ लड़का–आप धर्म किसको कहते हैं ? और हमारा कर्त्तव्य क्या है ?

प्रहलाद–धर्म वही है जो धारण करने योग्य हो, क्षमा दया, उपकार सहन शीलता सत्यता, अहिंसा, अस्तेय, सरलता प्रेम, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, विवेक, वैराग्य आदि धर्म के प्रमुख अङ्ग हैं। और दूसरो की
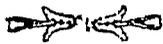
भलाई करना, किसी के दिल को न दुखाना किसी के साथ छल या कपट का व्यवहार न करना सब से स्नेह भाव रखना, सबके साथ उदारता पूर्वक बर्तना, किसी से राग द्वेष न करना यही हम सबका कर्त्तव्य कर्म है।

४ लड़का—भाई, तुम्हारी बातों पर ध्यान देने से तो हमको यह ज्ञात हो रहा है कि गुरु जी अब तक जो कुछ हमको पढ़ाते रहे हैं, वह सब अक्षरश असत्य है। आज से मैं तो अपने हृदय-मन्दिर के भीतर एक अपूर्व विलक्षण प्रकाश का अनुभव कर रहा हूँ। भाई तुम्हारी बुद्धि और विद्या की मैं किन शब्दों में प्रशंसा करूँ!

१ लड़का—सचमुच तुमने हम लोगों को सही रास्ता बतला दिया है।

सब लड़के—हम सब तुम्हारे अत्यन्त आभारी रहेंगे।

प्रह्लाद—भाइयो मैंने तुम्हारे ऊपर कोई भी उपकार नहीं किया। अपने कर्त्तव्य मात्र का पालन किया है। अतएव मेरा कृतज्ञ होने की कोई आवश्यकता नही है। आओ, हम सब मिलकर आनन्द के साथ भगवान का गुण-गानकरें।

[सब लड़के मिलकर भगवान की स्तुति करते हैं]

गीत नं० ९

दयामय परम पिता परमेश!
जय जीवन धन, निर्धन के धन, करुणासिन्धु रमेश!

निखिल-निरञ्जन, जन-मन-रञ्जन, भय-भंजन सर्वेश !
प्रणतपाल, दुखकाल, निबल-बल प्रेम-निलय प्राणेश !
दयामय परम पिता परमेश !

(शंडामर्क का प्रवेश)

हैं ! यह तुम लोग क्या कर रहे हो ?

सब लड़के—भगवान की स्तुति ।

शंडामर्क—कौन भगवान ? जगन्नाथ हिरण्यकशिपु ? तब तो तुम अच्छा कर रहे हो ।

१ लड़का—नहीं, अब हम लोग हिरण्यकशिपु को ईश्वर नहीं मानते ।

दूसरा लड़का—अब प्रह्लाद भैया ने हमारे हृदय-कपाट खोल दिये हैं ।

तीसरा लड़का—हमारी बुद्धि पर से अज्ञान का पर्दा हटा दियाहै

चौथा लड़का—इसी लिए हम सब भगवान हरि का गुण गान कर रहे हैं ।

शंडामर्क—(क्रोधित होकर) बदमाशो ! अभी तुम सबको दण्ड दिया जावेगा । तुम्हारे शरीर की चमड़ी उड़ादी जायगी ।

सब लड़के—फिर भी आपके हाथ एक दमड़ी न आयगी ।

शंडामर्क—मैं बहुत कठोर दण्ड दूंगा ।

सब लड़के—हम लोग उससे नहीं डरेंगे ।

सुबोध—और अपने पथ से विचलित नहीं होंगे ।

शंडामर्क - मैं तुम सबको कारागार में डलवा दूँगा ।

सब लड़के—किस अपराध में ?
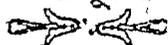
सब लड़के—तुम सब राजद्रोही हो। राजाज्ञा को भंग करते हो।

एक लड़का-ऐसी अनुचित आज्ञा का पालन अब हम कभी नहीं करेंगे।

शंडामर्क—मैं अभी तुम लोगों की बुद्धि ठिकाने किये देता हूँ।

(शंडामर्क सबको बेंतों से खूब पीटता है।

सब लड़के—(पिटते हुए) भगवान् विष्णु की जय हो।

प्रह्लाद-भगवान इनको सद्बुद्धि प्रदान करें।

(शंडामर्क प्रह्लाद को पीटता है। पर्दा बदलता है।)

पाँचवाँ दृश्य अंक चौथा

स्थान—राजसभा।

[हिरण्यकशिपु राजसिंहासन पर विराजमान है। दरबारी गण यथास्थान बैठे हुए हैं। गायिकाएँ गा रही हैं]

गान गीत नं० १०

आओ जीवन की मधुर रागिनी गावें।
प्रेमासव का कर पान प्रमोद मनावें॥
हम अन्धकार में पूर्ण उजाला करदें।
क्षण भर में पुरुषों को मस्ती से भरदें॥
यदि चाहें तो सबको निज दास बनावें।
सारे जग में हम विजय ध्वजा फहरावें॥

हिरण्य०—सुन्दरिओं की शक्ति सचमुच ऐसी ही होती है। इस रूप और लावण्य पर, इस मधुर मन्द-मन्द मुस्कान

पर कौन ऐसा पुरुष है, जो अपना सर्वस्व निछावर न कर दे।

[कुछ प्रजा जनों का प्रवेश]

सब प्रजाजन–दुहाई है! दुहाई है! अन्नदाता हमारी रक्षा करें, हम पर बड़ा अन्याय हो रहा है। बड़ा अत्याचार हो रहा है।

हिरण्य०—तुम लोग कौन हो, और किस लिए दरबार में आकर शान्ति भंग कर रहे हो? किसने तुम पर अन्याय किया है?

प्रजाजन—आपके राज्य कर्मचारी गण हम लोगों से निश्चित भूमि करके अतिरिक्त एक-एक स्त्रीभी भेंटमें मांगते हैं। हम लोग स्त्रियां कहां से लावें? इतने धनाढ्य नहीं हैं कि दासियां खरीद कर उन लोगो की भेट करें। दयालो! हम पर दया कीजिए। कृपानिधान! इस अन्याय से हमको बचाइये।

हिरण्य०–नालायको! राजाज्ञा को तुम लोग अन्याय कहते हो। यदि तुम लोग धनवान् नहीं हो तो राज–सेवा के लिए अपने घर की स्त्रियो में से एक-एक स्त्री भेंट कर सकते हो। संसार में अभी महिलाओं का अभाव नहीं हुआ है। जाओ, राजाज्ञा का पालन करो। यही प्रजा का प्रमुख धर्म है। प्रजा के तन' मन, और धन सभी पर राजा का अधिकार होता है।

प्रजाजन—तब क्या अन्नदाता की यही इच्छा है कि नारियां भेंट में दी जावें?
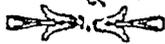
दुर्दान्त—हाँ, हाँ, महाप्रभु की यही आज्ञा है।
वज्रमूर्ति—यदि जगन्नाथ की आज्ञा का पालन करने में कुछ भी ढील की तो एक एक का सिर धड़ से अलहदा कर दिया जावेगा।
भयंकर—अजी, मैं तो आज्ञा मिलते ही इन जैसे सैंकड़ों मच्छरों को दांतों से चबा जाऊँगा।
दरबारी०—और मैं इन सब बदमाशों के ऊपर गरम तेल छिड़कवा दूँगा।
प्रजाजन—(जाते हुए स्वगत) ऐसे राक्षसों से न्याय की आशा करना भी भयानक भूल है।

[सब प्रजाजन जाते हैं, और शंडामर्क प्रह्लाद तथा सुबोध को खींचता हुआ लाता है]

शंडामर्क—अन्नदाता की जय हो।
हिरण्य०—क्या समाचार है शंडामर्क जी ?
शंडामर्क—जगन्नाथ ! इन दोनों लड़कों ने पाठशाला के समस्त छात्रों में राजद्रोह की उग्र भावना उत्पन्न कर दी है। अब वे लोग जगदीश्वर को परमात्मा नहीं मानते। और राज्य द्वारा स्वीकृत शिक्षा-सिद्धान्तों में से एक शब्द पर भी विश्वास नहीं करते।
हिरण्य०—इन दोनों धूर्तों को राज-द्रोह के अपराध में कारागार में बन्द कर दिया जाय। शीघ्र ही इनको मृत्यु-दण्ड की आज्ञा सुनाई जावेगी। भयङ्कर, लेजाओ इनको।

[भयंकर दोनों को पकड़ कर ले जाना चाहता है।]

दरबारी०—जगन्नाथ ! मेरा लड़का कभी राजद्रोही नहीं होसकता
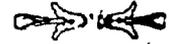
हम लोग पचपन पीढ़ियों से महान राज भक्त चले आते हैं। फिर यह स्वप्न मे भी सम्भव नहीं है कि मेरा पुत्र सुबोध राजद्रोह का अपराध करे। अन्नदाता की जय हो हम अन्नदाता के अन्न से पलते हैं। फिर भला राजद्रोह किस प्रकार करेंगे ? पिछले देवासुर संग्राम मे मेरे सुयोग्य पिताजी ने सरकार की सेना के लिये नौ करोड़ स्वर्ण-मुद्रायें पांच लाख पचपन हज़ार सुन्दर स्त्रियाँ और अस्सी बढ़िया मदिरा के घड़े भेट किये थे। फिर उन्हीं का पौत्र राजद्रोह कर सकता है। अब भी मैं महाप्रभु की सेवा तन, मन और धन से करने को तैयार हूँ।

हिरण्य०—तुम्हारी और तुम्हारे पूर्वजो की राज-सेवा का खयाल करके तुम्हारे पुत्र को हम छोड़े देते हैं। परन्तु इतना ध्यान रखना कि यह कभी राजद्रोहात्मक बातें अपने मुख से न निकाले। जाओ, हमारी सेवा के लिए पांच सौ सुन्दर युवतियों का प्रबन्ध शीघ्र करो।

[दरबारीलाल सुबोध को ले जाना चाहता है, वह नहीं जाता]

सुबोध—मैं प्रहलाद भैया को छोड़ कर नहीं जा सकता।

दरबारी०—अबे चल, प्रहलाद के भाई। तेरी माता तेरे बिना बहुत व्याकुल हो रही है। यदि तू शीघ्र ही उसके पास नहीं पहुंचा तो वह तेरे वियोग में अपने प्राणो को त्याग देगी।

प्रहलाद—सुबोध, माता को कष्ट देना सन्तान का धर्म नहीं है।

यदि तुम मुझ से कुछ भी स्नेह रखते हो तो तुरन्त ही माता जी की सेवा में पहुँचो। यदि तुमने हठ पूर्वक मेरी इस बात की अपेक्षा की तो, मुझे भी अत्यन्त क्लेश होगा। जाओ, अविलम्ब माता की सेवा में पहुँचकर उनका चरण स्पर्श करो।

सुबोध-भाई ! तुम मुझे बहुत विवश कर रहे हो, अतएव तुम्हारे अनुरोध से जाता हूं। मेरा चित्त तो तुमको इस दशा में छोड़ कर, जाने को नहीं चाहता।

प्रहलाद-भैया ! मेरी कुछ चिन्ता न करो। भगवान मेरे सहायक हैं। मुझे कुछ भी कष्ट न होगा। तुम शीघ्र चले जाओ।

[दरबारीलाल के साथ सुबोध का प्रस्थान]

हिरण्य०-भयंकर, तुम अब तक इस नालायक लड़के को क्यों नहीं ले गए। जाओ इसको कारागार में अन्य सब बन्दिओं से पृथक रखा जावे, ताकि यह अपने दुर्विचारों की दुर्गन्धि दूसरे कैदियों तक न पहुँचा सके।

[भयंकर प्रहलाद को ले जाता है। पर्दा बदलता है]

अंक दूसरा — दृश्य छठवां

स्थान—अन्तःपुर।

[महारानी अकेली बैठी हुई विचार-निमग्न दिखलाई देती है।

महारानी—(स्वगत) इस राज्य की दुराचारमयी प्रगति की

बढ़ती को देखते हुए मुझे आशंका होती है कि शीघ्र ही कोई अमंगल होने वाला है।

[निर्मला प्रवृष्टि होती है]

महारानी किस चिन्ता-धारा में बह रही हैं ?

महारानी—आओ बहिन बैठो।

[निर्मला बैठती है]

मैं यह सोच रही थी कि इस महान राज्य में दिन ब दिन अन्याय और अत्याचार बढ़ते जाते हैं। धनवान निर्धनों की पसीने की कमाई को छल और बल से छीन रहे हैं, बलवान दुर्बलों का गला घोंट कर, उनके स्वत्वों को हड़प रहे हैं। महिलाओं की इज्जत पर राज कर्मचारी, राजाज्ञा का सहारा लेकर, दिन दहाड़े डाका डाल रहे हैं। धर्मनिष्ठ जनता के प्राण हर समय संकट में हैं। पाठशालाओं में गुलाम बनाने वाली शिक्षा दी जा रही है। किसी को धार्मिक स्वतन्त्रता नहीं है। ईश्वर और धर्म के खिलाफ अनेक उपायों द्वारा प्रचार किया जा रहा है। उन सभी उपायों में राज-सत्ता का प्रयोग किया जाता है। सेना का व्यय तेजी के साथ बढ़ रहा है। और महा प्रभु तथा उनके कृपापात्रों की भोग-लालसा दिनपर दिन प्रज्वलित हो रही है। राज्य का खजाना खाली हो गया है, जिसकी पूर्ति प्रजा पर नये-नये कर लगा कर की जा रही है। परन्तु ऐसा कब तक चलेगा ? गरीब प्रजा कब तक यह अन्याय और अत्याचार सहती रहेगी।

निर्मला—महारानी ठीक कह रही हैं, वह खुद भूखी रहकर राजा और राजकर्मचारियों के लिए, कब तक कामिनी और काञ्चन भेट करती रहेगी ? चारो ओर पुरुषों
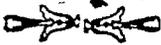
की करुण-पुकार कुलाङ्गनाओं का हाहाकार और बालकों का चीत्कार का ही श्रवणगोचर होता है।

महा०—मुझे ऐसा जान पड़ता है कि शीघ्र ही कोई ईश्वरीय शक्ति अवतरित होकर, इस अत्याचार और अन्याय के साथ ही इस राज-सत्ता का भी अन्त कर देगी।

निर्मला—महारानी की धारणा मुझे भी सत्य प्रतीत होती है परन्तु इसका कोई उपाय नहीं है, महारानी ?

महारानी—उपाय ही तो मैं खोजना चाहती हूं। परन्तु कोई दिखलाई ही नहीं देता। यदि प्रजा और राजा की भलाई के लिए मुझे अपने प्राण भी समर्पण करने पड़ें तो मैं सहर्ष उद्यत हूं।

नि०—महारानी का अनुकरण करने के लिए मैं भी तैयार हूं।

(विमला का प्रवेश)

विमला—महारानी की सेवा में आज मैं एक अशुभ समाचार लाई हूं।

महारानी—क्या समाचार है ?

विमला—राजकुमार प्रहलाद को महाप्रभु ने कारागार में डलवा दिया है, और शीघ्र ही वे उनको राजद्रोह के अपराध मे प्राण-दण्ड की आज्ञा सुना देंगे।

[महारानी मूर्च्छित हो जाती है। निर्मला और विमला उनको होश में लाने का प्रयत्न करती हैं। [पर्दा बदलता है]
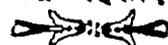
अंक दूसरा दृश्य सातवां

स्थान—कारागार।

[प्रह्लाद अकेला बैठा हुआ। ईश्वराधना कर रहा है]

गीत नं० ११

रमापति, दीनबन्धु कर्त्तार।
करुणाकर, सुख-सागर, धी-घर, माया-पारावार!
खल घालक, जन-पालक, जगपति, जीवन-प्राणाधार!
निखिल निरञ्जन, निर्धन के धन अशरण के आधार।
रमापति दीनबन्धु कर्त्तार ॥ १ ॥
पूषण में तेरा प्रकाश है,
पुष्पों में तेरा विकास है,
सब जग में तेरा निवास है,
* पूत प्रेम आगार!
रमापति दीनबन्धु कर्त्तार ॥ २ ॥
तू ही निर्माता–त्राता है तू ही करता है संहार।
प्रियतम तू ही कर्णधार है, जीवन-नौका कर दे पार॥
लदा नाव पर पाप-भार है,
मन-केवट बिल्कुल गँवार है
और विश्व–सागर अपार है, तू ही कर निस्तार।
रमापति दीनबन्धु कर्त्तार ॥ ३ ॥
तू विश्वम्भर, अजर अमर है, अतुलित बल का है भंडार।
निर्गुण कहलाता है फिर भी, तेरे गुण हैं अकथ अपार॥

* पूत = पवित्र।

जड़ "वेचैन,, विकल है अतिशय,
प्रभु हर ले जग का सारा भय,
कर दे जगती को प्रेमालय, चारो फल दातार ।
रमापति दीनबन्धु कर्त्तार ॥ ४ ॥

[विकटानन का प्रवेश]

राजकुमार ! यदि अब भी तुम अपने विचारो को बदल दो तो मैं महाप्रभु से कह कर तुमको प्राण-दान दिलवा सकता हूँ ।

प्रहलाद–किन विचारो को मुझे बदलना होगा ?

विकटा०–अपने नास्तिकतापूर्ण और राजद्रोहात्मक विचारो को छोड़ कर, तुम महाप्रभु को ही ईश्वर समझो, और उनके महा शत्रु विष्णु का नाम अपने मुख से कभी मत निकालो ।

प्रह्लाद–आश्चर्य की बात है कि तुम लोग आस्तिकता को नास्तिकता बतलाते हो । धर्म को अधर्म समझते हो, और पुण्य को पाप मानते हो । भाई, मुझे मृत्यु का भय न दिखाओ । मैं उसका आनन्द पूर्वक आलिङ्गन करने को तैयार हूँ । उसमें भी मैं अपने प्रभु की झांकी देखता हूँ ।

विकटा०–राजकुमार ! ऐसी भूल न करो । मृत्यु बड़ी भयानक है । अत्यन्त अप्रिय है । अपनी हठ को छोड़ दो । राजमहल के सुखों को न ठुकराओ । संसार में भोगैश्वर्य से बढ़ कर और कोई वस्तु नहीं है । सुरा और सुन्दरियो का आनन्द जिसने नहीं लूटा, वह सचमुच अभागा है ।

प्रह्लाद–मन्त्री जी, सुरा और सुन्दरियों का आनन्द आपही को मुबारिक हो। भोगैश्वर्य की लालसा भगवद्भक्तों को उसी प्रकार नहीं होती जिस प्रकार कि अमृत का पान कर लेने पर कोई कड़वी दवा को पीना नहीं चाहता। राजमहल के वे सुख जो कि गरीबों का खून चूस-चूस कर जुटाये गये हों, मेरी दृष्टि में नितान्त तुच्छ है। मैं इनके प्रलोभन से विचलित नहीं हो सकता। मृत्यु की भयानकता भी मुझको सत्य के मार्ग से नहीं हटा सकती। मन्त्री जी, जाइए। अपना समय नष्ट न कीजिए। आप मुझे अपने ईप्सित पथ पर नहीं चला सकते।

विकटा०–राजकुमार, तुमको किसी दिन पछताना पड़ेगा। जलती हुई चिता की गरमी तुम सहन नहीं कर सकोगे विष का प्याला किस तरह पीओगे? हाथी के पैर के नीचे कुचलना तुम्हारे जैसे सुकुमार बालक के लिए कितना भयानक दृश्य होगा? कोई न कोई ऐसा ही दण्ड तुमको दिया जावेगा।

प्रह्लाद–जिस देश की पृथ्वी ऐसी-ऐसी अनेक पाप-लीलाओं की अभ्यस्त हो गई हो उसी पर जन्म लेने वाले एक राजकुमार के लिए ऐसी बातें नवीन नहीं हैं। जहाँ प्रजा के अनगिनती निर्दोष बालको की हत्या निर्दयता के साथ करना दैनिक व्यापार हो, वहां एक राजकुमार को जलती हुई अग्नि में डाल देना, या पहाड़ की चोटी पर से फिकवा देना, कौन सी अनोखी बात है। जाओ, अपने महाप्रभु से कह दो
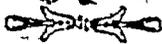
कि वे चाहे जिस तरह की कड़ी से कड़ी, सजा मुझको दे सकते हैं।

[विकटानन जाता है। भयंकर विष का प्याला हाथ में लिए हुए आता है।]

भयंकर–तुम्हारे पिताजी ने तुम्हारे पीने के लिए यह विष मिला हुआ दूध भेजा है।

प्रह्लाद–पिताजी का भेजा हुआ यह महाप्रसाद फिर भला कहां मिलेगा। लाओ, मैं इसे प्रेम पूर्वक पी डालूँ।

[प्याला लेकर पी जाता है।]

इस दूध में तो भाई, बड़ा स्वाद था। ऐसा स्वादिष्ट दूध मैंने कभी पहले नहीं पिया था।

भयंकर–इस दूध का सच्चा स्वाद दो घंटे बाद मालूम होगा राजकुमार।

[प्रस्थान]

(पर्दा गिरता है)

अंक दूसरा दृश्य आठवाँ

स्थान—हिरण्यकशिपु का विश्राम-भवन।

[हिरण्यकशिपु एक बढ़िया पलंग पर लेटा हुआ है। महारानी उसके समीप ही एक चौकी पर बैठी हुई है।]

महारानी–प्राणनाथ! अपने पुत्र पर दया कीजिए। उसे क्षमा कर दीजिए वह आपकी ही सन्तान है।

हिरण्य०–महारानी! उस बदमाश के सम्बन्ध में मैं तुम्हारी

कोई भी बात सुनना नहीं चाहता । और अब वह इस संसार में कुछ ही घंटे का मेहमान है । विष उसका कुछ ही घंटो के अन्दर काम तमाम कर देगा।

महारानी–(कातरतापूर्वक) आपने उसे विष दिलवाया है ?

हिरण्य०–हाँ, उसे विष मिला हुआ दूध पिलवाया है ।

[महारानी पछाड़ खाकर पृथ्वी पर गिरती हैं ।]

हा ! मेरा वत्स ! मेरा बच्चा ! मेरा प्रह्लाद ! नाथ, उसे बचाइए । उस पर दया कीजिए ।

(रुदन)

हिरण्य०—छी ! दुर्बल स्त्री हृदय ! हिरण्यकशिपु दैत्यराज की महारानी होकर एक नालायक लड़के की मृत्यु पर रुदन करती है ।

महारानी–(रोते हुए) दैत्यराज माता की ममता को नहीं समझ सकते । जगन्नाथ का हृदय दया से नितान्त शून्य है, फिर यदि वह पुत्र को विष दिलवा कर अपने कृत्य पर शोक प्रकाशित न करें तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

हिरण्य०–अपने लड़ैते लाल की जाकर खोज खबर लो। इस राज–प्रासाद को अपने आँसुओं की सरिता में बहाने का प्रयत्न मत करो जाओ, मरते हुए उसको एक नज़र देख आओ ।

(महरानी जाती हैं ।)

(पर्दा गिरता है)
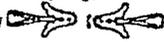
अंक दूसरा दृश्य नवां

स्थान—जेलखाना।

[प्रहलाद बैठा हुआ ईश्वर-प्रार्थना कर रहा है।)

गीत नं० १२

चाह नहीं है मुझे रमापति! धन-कुवेर बन जाने की।
नहीं कामना मुझे लोकपति! जग-सम्राट् कहाने की॥
अभिलाषा है नहीं निरञ्जन, निर्मल कीर्त्ति कमाने की।
और लालसा नहीं सौख्यनिधि! अपने सुख के पानेकी॥
यह भी नहीं मुझे आकांक्षा. मैं जगका गुरु कहलाऊं।
केवल यही चाहता हूँ मैं प्रेम-पूर्ण मानस पाऊं॥
सकल सृष्टि को हे सर्वेश्वर! सदा एक सा प्यार करूं।
अपने दुखी भाइयो का सब कष्टों से उद्धार करूं॥
कभी किसी के साथ बुरा व्यवहार न करुणागार करूं।
जगती के प्रत्येक जीव का मैं सच्चा उपकार करूं॥
मातृभूमि की सेवा में मैं तन मन-धन से लग जाऊं।
भगवन्! यही चाहता हूँ मैं, प्रेम-पूर्ण मानस पाऊं॥ २॥
पत्थर बरसाने वालो पर, बरसाऊं श्रद्धा के फूल।
शूल चुभाने वालों की निज मस्तक पर रक्खूं पद-धूल।
अपने महाशत्रु के भी मैं, कभी नहीं जाऊं प्रतिकूल।
स्वामिन! क्षमा और करुणा को, कभी नहीं जाऊं मैं भूल॥
भूतल पर प्रभु, यथाशक्ति मैं, सदा शांति-जल बरसाऊं।
भगवन! यही चाहता हूँ मैं प्रेम-पूर्ण मानस पाऊं॥ ३॥

(महारानी प्रविष्ट होती हैं।)

महारानी–पुत्र! तुम्हारी तबियत कैसी है?

प्रहलाद—माता जी, प्रणाम! आपके आशीर्वाद से आनंद सहित हूँ।

महारानी—तुमको महाराज ने विष मिला हुआ दूध पीने को भेजा था? क्या तुमने वह पी लिया।

प्रहलाद–हां माताजी। उस दूध में बड़ा स्वाद था।

महारानी-क्या कहते हो उसमें बड़ा स्वाद था। विष मिश्रित दुग्ध में स्वाद? आश्चर्य है। उससे तुमको कष्ट हुआ होगा?

प्रहलाद—नहीं माताजी, उसके पीने से मेरे शरीर में एक नवीन उत्साह उत्पन्न होगया है। बड़ी स्फूर्ति आगई है। कष्ट तो कोई नहीं हुआ।

महारानी–क्या कहते हो कष्ट कोई नहीं हुआ। नवीन उत्साह और स्फूर्ति का प्रादुर्भाव होगया है। महान आश्चर्य की बात है।

(भयंकर आता है।)

(साश्चर्य) हैं तुम अभी तक जीवित हो। मरे नहीं राजकुमार।

प्रहलाद—नहीं, भाई! तुम मेरे मारने के लिए विशेष उत्सुक हो क्या? उस दूध ने तो भाई, अमृत का काम किया है, अगर मुझे मारना ही चाहते हो तो मुझे मारने का कोई दूसरा उपाय करो।

भयङ्कर—मैं अभी जगन्नाथ को तुम्हारे न मरने की सूचना देता हूँ। (पयाण)

महारानी–बेटा अपनी हठ छोड़ दो। मेरी ओर देखो। इस हृदय
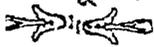
की पीड़ा का खयाल करो। तुम्हारे कष्टों को देख-देख कर मेरी छाती फटी सी जाती है। अपने पिता जी से विरोध करना ठीक नहीं है। उनकी आज्ञा के अनुसार चलना तुम्हारा प्रधान धर्म है।

प्रहलाद—माता जी, मेरे कष्टों का खयाल न कीजिये। मैं हरएक हालत मे अपने को सुखी समझता हूँ। पिता जी से मेरा कोई विरोध नहीं है। केवल सिद्धान्तो में मेरा उनसे विरोध है वे अपने को ईश्वर घोषित करते हैं। और मैं उनको ईश्वर नहीं मानता। वे तुम्हारे ईश्वर है, अपने सेवकों के ईश्वर हो सकते है, परन्तु मेरा ईश्वर तो वहीहै जोअक्षर अविनाशी अनादि और अनन्त है। जो समस्त संसार का कर्त्ता, भर्त्ता और हर्त्ता है। जो जगन्नियता और जगदीश्वर है। जो समदर्शी सर्वसत्ता-सम्पन्न और सर्वेश्वर है। पिताजी मेरी धार्मिक स्वतंत्रता में बाधा डालते हैं, मुझे अपना शत्रु समझ कर मेरी हत्या करना चाहते हैं और इस प्रकार छल एवं बल के द्वारा सत्य के मुँह को ढक देना चाहते हैं। वह ऐसा करते रहें। मुझे कोई भय और कष्ट नहीं। भगवान मेरी रक्षा करेंगे। तुम्हारा आशीर्वाद मेरा अमङ्गल न होने देगा।

माता, तुम एक वीर पुत्र की जननी होकर, कायरता को अपने हृदय मे स्थान मत दो। अपने चित्त से चिन्ता को निकाल दो। मन को स्थिर करो। और मुझे आशीर्वाद दो कि मैं जीते जी अपने कर्त्तव्य से

विचलित न होऊं, सत्य के प्रशस्त पथ से न हटूं। ईश्वर महाराज हिरण्यकशिपुका भी ईश्वर है, वहपरम स्वतन्त्र एक महान सत्ता है। इस सत्यामहको करोड़ों संकटो के एक साथ टूट पड़ने पर भी नहीं छोड़ूं।

महारानी-पुत्र, यदि तुम यही चाहते हो तो मै भी आज से तुम्हारे इस सन्मार्ग मे विघ्न-बाधा न डालूंगी। मेरा आशीर्वाद है कि तुम्हारे पथ के शूल फूल हो जांय, अग्नि तुम्हारे स्पर्श से ही शीतल होजाय और समस्त हिंसक जीव तुम्हारे साथ मित्रवत् व्यवहार रक्खें। यदि मुझ में कुछ भी पातिव्रत धर्म का तेज हो इस जीवन में जो कुछ भी सत्कर्म मैंने किये हों, उन सबका फल विपत्ति काल में तुम्हारी सहायता करे। तुमको किसी प्रकार का भी कष्ट न हो।

[प्रस्थान]

अंक दूसरा दृश्य दसवां

स्थान—हिरण्यकशिपु का शयनागार।

[हिरण्यकशिपु निद्रावस्था में स्वप्न देख रहा है]

(प्रह्लाद की सूरत उसे दिखलाई देती है।)

प्रह्लाद! प्रह्लाद! मै तुमको क्षमा नहीं कर सकता। तू समझता है कि मैं तुमको पुत्र समझ कर छोड़ दूंगा। नहीं, नहीं ऐसा कदापि नहीं होसकता।

जादूगर! तू नहीं मरेगा! तुझको मरना ही पड़ेगा। जादू के बल से चाहे तू विष को अमृत बना सकता हो।
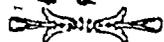
तलवार के एकाध वार को बचा सकता हो। परन्तु मेरा क्रोध तुझको जीवित न रहने देगा। मेरे कोपानल में जलकर तू शीघ्र ही राख हो जावेगा। मैं तेरे ऊपर भयंकर सर्प छुड़वाऊंगा फिर भी नहीं मरेगा तो सिंह के सामने डलवाऊँगा, इससे भी बच जायगा तो हाथी के पैर के नीचे कुचलवाऊंगा फिर भी नहीं मरेगा तो अग्नि मे जलवाऊँगा। क्या कहा फिर भी नहीं मरेगा! अच्छा तो ठहर मै तेरे मारने का और ही उपाय करता हूँ। तुझको पकड़ कर इस महल की सब से ऊंची मंजिल से नीचे फेंकता हूँ।

(पलङ्ग से उठकर जोर से दौड़ता है, और दीवाल से टकरा कर नीचे गिरता है। उसका सिर फूट जाता है, और रक्त की धारा बहने लगती हैं। राज महल की अनेक सेविकाऐं आकर उपचार करने लगती हैं)

(पट-परिवर्तन)

अङ्क दूसरा दृश्य ग्यारहवाँ

स्थान—कारागार।

[प्रहलाद अकेला बैठा हुआ एक कविता पढ़ रहा है]

ईश्वर अज अनादि अविनाशी। सत्य सनातन नित्य प्रकाशी।
जग प्रपंच यह जहँ लगिनीका। ईश्वर आदि मूल सब हीं का॥
तिन्ह पसारि निज अद्भुत माया। यह विचित्र संसार बनाया।
निज तन सों जिमि तन्तु निकारी। मकरी देइ वितान पसारी॥
बहुरि समेट हृदय निज लेही। जानिय सृष्टि ब्रह्म गति एही।
प्रलय करइ निज लय करि जाहीं। पुनि आरम्भ पसारइ ताही॥
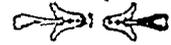
सूर्य्य चन्द्र इत्यादि ग्रह, भिगत कल्प अनुसार।
कल्प-कल्प संकल्प करि, रचत 5 विश्व करतार॥
स्वगुण स्वशक्ति प्रयोगन्ह हेतू। रचत ईश जग चाव समेतू।
पुनि सन्तत तेहि पालन करही। अन्त अशक्त जानि उर भरई॥
करि नवीन नव विधि प्रगटावत। इमि पुनि पुनि जग चक्र चलावत
जड़ जग चेतन प्रभु बल पाई। नाचइ कठ पूतरि की नाई॥
रचना करि पालन संहारा। तीन प्रधान कर्म करतारा।
करत कर्म निज बरु स्वतन्त्र जिमि। प्रेरत जगहि कर्म दिशि प्रभु तिमि
पंचतत्व निर्मित संसारा। थिर है केवल कर्म अधारा।
धरि अनेक वपु जीव जहाना। भोगत रहत कर्म-फल नाना।
तिन्हुँ गुण कर्म स्वभाव मिलाई। प्रभु निज शक्ति प्रकृति प्रगटाई॥
प्रकृति नटी नव नागरी, नट-नागर करतार।
जिनके अद्भुत खेल को, नाटक यह संसार॥

(भयंकर का प्रवेश)

राजकुमार! जगन्नाथ ने तुम्हारे खेलने के लिये ये दो काले सर्प भेजे हैं।

प्रह्लाद—अहा, इनमें मुझे अपने प्रभु का कृष्ण स्वरूप दिखलाई देता है। लाओ, लाओ इनको मैं अपने हृदय से लगा लूँ।

भयंकर से दोनों सर्प लेकर उनको अपने सिर पर रखता है, चूमता है, अपने हृदय से लगाता है और फिर अपने गले में हार की तरह डाल लेता है। सर्प हीरों के श्वेत हार के रूप में परिवर्तित होजाते हैं। भयंकर यह घटना देखकर कुछ समय तक महान आश्चर्यमयी
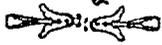
मुद्रा के साथ आंखें फाड़-फाड़ कर देखता रहता है और फिर भयभीत होकर भाग जाता है।

(पर्दा बदलता है)

अंक दूसरा दृश्य बारहवां

स्थान—राज-दरबार।

[हिरण्यकशिपु अपने कुछ प्रमुख राज्याधिकारियों के साथ मन्त्रणाकर रहा है]

हिरण्य०—मेरे बहादुरो! एक लड़के ने मुझे परेशान कर रक्खा है। और तुम लोगों से उसके मारने का कोई प्रबन्ध नहीं होता। एक छोटा सा छोकड़ा अपनी छद्मता द्वारा मुझ जैसे छत्रधारी विश्व-विजयी सम्राट् को छका रहा है, और तुम सब लोग शान्त बैठे हुए देख रहे हो। उस जादूगर के जादू को अपनी शक्ति रूपी शिला से कुचल कर चकनाचूर कर दो। मैं उसे आज मरा हुआ देखना चाहता हूँ। विकटानन और दुर्दान्त अभी जाकर उसे मेरे सामने उपस्थित करो।

[विकटानन और दुर्दान्त जाते है]

मेरे वीरो! आज तुम लोगों की तलवारें निकलकर उस उच्छृङ्खल लड़के के शरीर की बोटी बोटी कर डालें। यह काम अभी तुमको मेरे सामने करना होगा। मेरे संकेत करते ही अनेकों त्रिशूल उसके
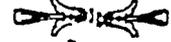
शरीर को छेद डालें। मेरी इस आज्ञा के पालन करने में जो कोई विलम्ब करेगा उसका शिर मैं अपनी भारी गदा से चूर-चूर कर दूंगा।

[प्रह्लाद को लेकर विकटानन और दुर्दान्त आते हैं]

हिरण्य०—(प्रह्लाद से) जदूगर लड़के ! अब तुम मरते समय अपने ईश्वर को अपनी सहायता के लिए बुलालो। (राक्षसों से) वीरो ! तुम लोग मिलकर इस जादूगर के मन्त्रों को बेकार करदो।

(एक साथ बीस भयानक असुर अपने अपने अस्त्र शस्त्रों को लेकर प्रह्लाद पर प्रहार करने के लिए उसकी ओर बढ़ते हैं। आधी दूर पहुँचते-पहुँचते उनकी गति बिल्कुल रुक जाती है। उनके पैर पृथ्वी से चुपक जाते हैं। हथियार जहां के तहां उठे हुए रह जाते हैं। हिरण्यकशिपु दाँत पीसता है प्रह्लाद ईश्वर का नाम स्मरण करता हुआ शांत और गम्भीर मुद्रा में खड़ा रहता है। पर्दा गिरता है।)

ड्राप सीन।

* दूसरा अंक समाप्त *
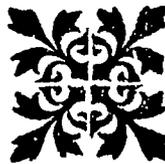
दृश्य पहला।

स्थान—दरबारीलाल का मकान।

[सुबोध और सुमति]

सुबोध-माताजी ! पिताजी की जिस प्रकार स्वार्थ वृत्ति दिन पर दिन बढ़ती जाती है उसी प्रकार उनकी खुशामदी आदतें भी उन्नति पर हैं। तुमने उनकी एक नई बात सुनी है ?

सुमति—वह कौन सी बात है पुत्र ?

सुबोध—हिरण्यकशिपु की भेंट के लिए वे पांच सौ सुन्दरियों का प्रबन्ध कर रहे हैं। आजकल उनको आठो पहर केवल एक यही चिन्ता सवार है कि कब पाँच सौ की संख्या पूरी हो, और कब वह उनको लेकर दैत्यराज की सेवा में उपस्थित हों।

सुमति-तभी आजकल वे हम लोगों से कोई बात नहीं करते। प्रातःकाल के घर से बाहर निकलते हैं, और रात्रि के नौ दस बजे वापिस आते हैं।
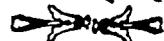
[दरबारीलाल आता है ।]

कहिये महाशय ! आजकल आप किस धुन में हैं ?

दरबारी०-कुछ नहीं ! व्यापार-सम्बन्धी अनेक कार्य रहते हैं। मैं तुमको हरेक काम-काज की रिपोर्ट देना उचित नहीं समझता । तुमभी मेरे प्रत्येक कार्य में हस्ताक्षेप न किया करो।

सुमति-मै आपकी आज्ञा का पालन करने की भविष्य में चेष्टा करूँगी परन्तु आजकल तुम्हारे सम्बन्ध में बहुत बुरी खबरे सुनने में आ रही हैं। उन खबरों के साथ मेरा भी सम्बन्ध है, इस लिए मैं तुमसे मजबूरी हालत में सब कुछ साफ़-साफ पूछना चाहती हूँ।

दरबारी०-मेरे विषय में क्या समाचार सुने जा रहे हैं ? और उनसे तुम्हारा क्या सम्बन्ध है ?

सुमति-सुना गया है कि आप अपने जगन्नाथ को प्रसन्न रखने के लिए पाँचसौ नवयौवनाओ का प्रबन्ध कर रहे हैं, और पाँच सौ के ऊपर मेरा नम्बर होगा। ये सब स्त्रियाँ हिरण्यकशिपु को भेंट की जावेंगी।

दरबारी०-क्या तुम अभी तक अपनी गणना नवयौवनाओं में करती हो ? कांटे के समान चुभने वाली तुमको जगन्नाथ पसन्द भी तो नहीं करेंगे।

(हँसता है)

सुमति-दुष्टात्मा हिरण्यकशिपु के दरबार में रह कर तुम अपनी कुलीनता को तो बिल्कुल भूल ही चुके हो । अब शीघ्र ही मनुष्यता को भूल कर असुरत्व को प्राप्त होने वाले
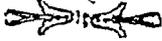
हो। वस्तुतः तुम्हारी दैवी प्रकृति के गुण क्रमशः विलुप्त हो रहे हैं, और आसुरी प्रकृति तीव्रता से जाग्रत हो रही है। महान् दुःख के साथ कहना पड़ता है कि किसी दिन तुम मेरी पवित्रता को भी स्वार्थ की तुला पर चढ़ा देने में नहीं चूकोगे।

दरबारी०—चुप रहो। इस प्रकार की बात कहने में तुमको लज्जा नहीं आती।

सुमति—लज्जा मुझको आनी चाहिए या कि तुमको? जो मनुष्य रुपये के बल से, एक असुर को प्रसन्न करने के लिए, एक-दो नहीं, दस-पांच नहीं, इकट्ठी पाँच सौ महिलाओं की पवित्रता को नष्ट करने के लिए प्रयत्न-शील हो, उस मनुष्य के निकट अपनी धर्म-पत्नी की इज्जत को बेच देना कोई विचित्र और अनहोनी बात नहीं है।

दरबारी०—सम्राट की आज्ञा का पालन न करके मैं अपने प्राण संकट में नहीं डालना चाहता। अपनी जान से हाथ नहीं धोना चाहता। जगन्नाथ की आज्ञा के उल्लङ्घन का अर्थ है महा प्रयाण की तैयारी करना।

सुमति—खेद है कि मुझे तुम जैसे कायर पुरुष की स्त्री बनना पड़ा। मृत्यु से डर कर पाप के पथ पर चलने वाले भीरु हृदय पुरुष तुम यह नहीं जानते कि मृत्यु अनिवार्य है। मृत्यु से तुम्हारी कोई रक्षा नहीं कर सकता। आज नहीं तो कल मरना ही होगा। फिर मृत्यु का इतना भय क्यों करते हो? आत्मा अजर अमर और अनन्त है। उसका विनाश नहीं होता। केवल शरीर नाशवान

है । उसके लिए मोह क्यों करते हो ? यह नहीं तो दूसरा शरीर सही । पुराने शरीर रूपी वस्त्र का मोह करना ठीक नहीं । भय और कायरता को छोड़ दो । अन्याय और अविवेक से दी हुई पाप करने के लिए उत्साहित करने वाली इस राजाज्ञा को ठुकरा दो । भगवान् तुम्हारी रक्षा करेंगे । प्राणों का मोह मत करो ।

दरबारी०—मैं तुम्हारी बात पर विचार करूँगा । मुझे एकान्त में सोचने का समय दो ।

(प्रस्थान)

अंक तीसरा दृश्य दूसरा

स्थान—मैदान और पहाड़ ।

[प्रहलाद को दुर्दान्त और भयंकर पकड़े हुए पहाड़की ओर ले जा रहे हैं ।]

भयंकर—राजकुमार, अपना जादू मुझे भी सिखला दोगे ? तुम्हारे जादू का आतंक सभी पर छा गया है । जगन्नाथ भी कुछ-कुछ घबड़ा गये हैं । भाई, हो भी बला के जादूगर, उस दिन भयानक विषधर भुजङ्गों को हीरक-हारों में बदलते देख कर तो मैं भी बहुत डर गया था । आशंका हुई कि कहीं मैं भी देखते-देखते किसी रमणी का शिरोभूषण न बन जाऊँ । राजकुमार मुझको भी अपना कंठहार न बना लें । यह विचार आते ही मैं तो वहां से भाग खड़ा हुआ ।
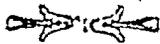
प्रह्लाद-भाई, आश्चर्य है कि तुम मुझको जादूगर समझते हो। मुझ में जादू की कोई भी करामात नहीं है।

दुर्दान्त-विष से न मरना, सर्पों का हार हो जाना, जगन्नाथ के करवाल का टूक टूक हो जाना, दैत्य वीरों के पैर पृथ्वी से चिपक जाना इत्यादि कार्य जादू नहीं है तो क्या हैं?

प्रह्लाद भाई, यह सब मेरे प्रभु की शक्ति का साधारण सा नमूना है।

दुर्दान्त-तब तो आपका प्रभु कोई बहुत बड़ा जादूगर मालूम होता है। तभी हजरत अब तक बच रहे हैं।

प्रह्लाद-हां भाई, यह समस्त सृष्टि उसी मायापति की लीला का एक छोटा सा दृश्य है -

वह स्वामी लोक त्रय का है, वह कर्त्ता सब संसार का है।
जड़ चेतन उसके हैं आधीन, सब खेल उसी सरकार का है॥

भयङ्कर—वह कौन है और कैसा है? हमने तो कभी देखा नहीं।

प्रह्लाद—

जगदीश्वर, जगन्नाथ, माधव, इत्यादि नाम उसके ही हैं।
उद्भव, पालन फिर महा प्रलय, ये तीन काम उसके ही हैं॥
वह दुष्टों का संहारक है, वह साधुजनों का पालक है।
जग की इस सारी लीला का, वह परब्रह्म संचालक है॥
भक्तों के दुःख मिटाने को, अवतार यहाँ वह लेता है।
जगतीतल से सब दुष्टों का, अस्तित्व मिटा वह देता है॥

भयङ्कर-महाराजाधिराज हिरण्यकशिपु तो अपने ही को परब्रह्म

परमात्मा और जगदीश्वर बतलाते हैं। और आप अपने प्रभु को यह परम पद प्रदान करते हैं। आप दोनों में से कौन झूँठा और कौन सच्चा है, हमको इसका निश्चय किस प्रकार हो ?

प्रह्लाद—समय आने पर यह सब आपको स्वयमेव मालूम हो जावेगा।

दुर्दान्त—इस पहाड़ की चोटी से नीचे फेंकने पर भी यदि तुम नहीं मरोगे तो हम समझ लेंगे कि तुम्हारा ईश्वर ही सच्चा ईश्वर है, और दैत्यराज का अपने को परमात्मा घोषित करना केवल हम लोगों को धोखा देकर अपना स्वार्थ सिद्ध करना है।

भयङ्कर—इस बात से मैं भी सहमत हूँ।

(दुर्दान्त और भयंकर प्रह्लाद को लेकर पहाड़ की चोटी पर पहुँचते हैं। और उसको ऊपर उठा कर नीचे फेंक देते हैं। तुरन्त ही भगवान् प्रकट होकर प्रह्लाद को बीच ही में लपक लेतेहैं। तदुपरान्त भगवान अन्तर्धान होजाते हैं।)

(पर्दा बदलता है)

अंक तीसरा दृश्य तीसरा

स्थान—दरबारीलाल का मकान।

[सुमति और दरबारीलाल]

सुमति—श्रीमान ने क्या निश्चय किया

दरबारीलाल—मैं तुम्हारी बात मानने को तैयार हूँ। हिरण्यकशिपु को अब एक भी स्त्री भेंट नहीं करूंगा।

सुमति—और यदि उसने तुमको पकड़ कर धमकाया तो नहीं जाओगे? अपने निश्चय से विचलित तो नहीं हो जाओगे?

दरबारी०-नहीं, अब मैं दैत्यराज की अनुचित आज्ञा को कभी नहीं मानूंगा। सत्य और न्याय के लिये अपने प्राणों की बाजी लगा दूंगा।

सुमति—आज मैं तुम्हारे मुख से यह सुन कर कृतार्थ होगई। ईश्वर तुम्हारी सहायता करेंगे। निश्चय समझिए अब हिरण्यकशिपु के अत्याचारो का शीघ्र ही अन्त होने वाला है उसके अत्याचारो के बोझ से पृथ्वी कांपने लगी है। प्रजा ऊब कर विद्रोह करने को कटिबद्ध है। कृपासागर भगवान विष्णु शीघ्र ही अवतरित होकर पीड़ित-जनों की रक्षा करेंगे। आपको भी स्वार्थ को छोड़ कर परमार्थ का राग गाना चाहिये, क्योंकि अब युग पलटने वाला है।

दरबारी०-तुम तो अभी से उंगली पकड़ कर पहुँचा पकड़ना चाहती हो। नहीं श्रीमती जी मुझसे ऐसा नहीं हो सकेगा। स्वार्थ मेरे जीवन का साथी है। वह शैशव काल से मेरे साथ रहा है, अब वृद्धावस्था के आगमन काल में उसका साथ छोड़ देना, क्या उसके प्रति अन्याय नहीं होगा।

सुमति—यदि ऐसा ही है तो आप उसका साथ मत छोड़िए। समय आजाने पर वह स्वयं आपका साथ छोड़ देगा।

क्या समस्त संसार आपका साथ छोड़ देगा। केवल परमार्थ ही आपके साथ जा सकेगा।

दरबारी –यदि ऐसा ही होगा तब तो मुझे हठ छोड़ कर तुम्हारी बात मान लेनी चाहिए। परन्तु मुझे परमार्थ तत्त्व की दीक्षा किससे लेना चाहिए।

(सुबोध प्रवेश करते हुए

माता जी से बढ़ कर इस विषय का कोई दूसरा पंडित तुमको हिरण्यकशिपु के सारे राज्य में नहीं मिलेगा। इसलिये इन्हीं को अपना गुरु बनाइये। इन्हीं से इस विषय की शिक्षा प्राप्त कीजिये।

दरबारी०–लोग यह सुन कर क्या कहेंगे कि श्रीमान दरब बहादुर अपनी पत्नी के शिष्य बन गये भाई, मैं ऐसा नहीं करूँगा। लज्जा के कार बाहर भी नहीं निकला जावेगा।

सुबोध -इस राज्य के जो लोग विद्या, बुद्धि और साहस यों से भी पिछड़े हुये हैं, उनकी बातों पर आप प्रकार का ध्यान ही नहीं देना चाहिये। फिर अपने पति की अर्द्धाङ्गिनी समझी जाती है उ विद्या का ज्ञान प्राप्त कर लेना कोई बुरी बात

दरबारी०–भाई तुम और तुम्हारी माता तो सचमुच विज्ञान में मुझसे बहुत आगे बढ़ गई हैं। इन्हीं से परमार्थ का पाठ पढ़ना आरम्भ कहिए देवी जी, आप कब पढ़ाना शुरू क

सुमति—जब से आप पढ़ना चाहें। थोड़ा सा शुरू कर दीजिये।
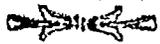
दरबारी०—ठीक कहती हो। अच्छा तो बतलाइए, परमार्थ विद्या किसको कहते हैं ?

सुमति—जो स्वार्थ से मनो वृत्ति को हटाकर सांसारिक भोगैश्वर्य के प्रति अरुचि उत्पन्न कर देता है तथा जिससे परम पुरुष परमात्मा की प्राप्ति होती है, वही परमार्थ कहलाता है।

दरबारीलाल—परमार्थ के मुख्य मुख्य साधन कौन से हैं ?

सुमति—परोपकार, विश्व प्रेम, दया, क्षमा, सहिष्णुता, दान, तपश्चर्या, इन्द्रिय-दमन, मनोनिग्रह, विवेक और वैराग्य, ये परमार्थ के प्रमुख साधन हैं।

दरबारी०—परमार्थ का फल अनन्त होता है या कि नाशवान।

सुमति—परमार्थ से नित्य सनातन ब्रह्म सुख की प्राप्ति होती है।

दरबारी०—आज इतना ही रहने दीजिए। कल और आगे बतलाइएगा।

सुमति—जैसी आपकी इच्छा।

[दरबारी लाल जाता है]

(पर्दा बदलता है)
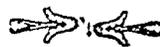
अंक तीसरा दृश्य चौथा

स्थान—राजप्रासाद।

[हिरण्यकशिपु और भयंकर बातें कर रहे हैं। हिरण्यकशिपु के चहरे पर गहरी चिन्ताके लक्षण दिखलाई देते हैं]

हिर०—(क्रोध-पूर्वक) क्या कहता है, वह नहीं मरेगा ? वह अमर है ? क्या तेरी बुद्धि पर भी उस जादूगर ने कुछ जादू कर दिया है ? होश में आ, इस प्रकार की मूर्खता पूर्ण बातें करना छोड़।

भयंकर—मैं सच कहता हूं, जगन्नाथ उसका प्रभु महान शक्तिशाली है। वह उसकी रक्षा कर रहा है। वह तुम्हारे मारने से कदापि नहीं मरेगा।

(हिरण्यकशिपु ताली बजाता है। चार असुर उपस्थित होते हैं)

हिर०—(असुरों से) इसका दिमाग खराब होगया है। कुछ दिनों तक इसको जेल की हवा खिलाओ। और ढुंढा को मेरे पास भेज दो।

(चारों असुर हिरण्यकशिपु को अभिवादन करते हैं, और भयंकर को पकड़ ले जाते हैं।)

हिर० - (स्वगत) प्रहलाद की करामाती चालों को देख-देख कर मेरी बुद्धि भी चकरा गई है। न मालूम किस करामात के कारण वह मारने से भी नहीं मरता। परन्तु उसे मरना तो चाहिये ही

(ढुंढा आती है)

ढुंढा—कहो, भैया ! किस लिए मुझको याद किया है।

हिर०—बहिन, प्रहलाद किसी तरह से भी नहीं मरता है। इसलिए मैं तुमको कुछ कष्ट देना चाहता हूं। तुमको अग्नि में न जलने का वरदान प्राप्त है। मेरे हित के लिए तुम प्रहलाद को गोद में लेकर अग्नि में बैठ जाना।

बरदान के प्रभाव से तुम जलने से बच जाओगी और प्रह्लाद जल कर खाक हो जावेगा।

ढुंढ--भैया तुम्हारे लिए मैं सब कुछ करने को तैयार हूं। अपने सेवकों को आज्ञा दीजिए कि वे चिता तयार करें। मैं हँसते हँसते उस अभागे लड़के को गोद में लेकर उसमें कूद पड़ूंगी। कुछ ही क्षणों में उसका स्वर्ण सा शरीर जल कर राख हो जावेगा। फिर मैं हँसती हुई, तालियां बजाती और नाचती गाती उसमें से निकल कर महारानी को चिढाऊँगी, उसके जख्मों पर नमक और पानी लगाऊँगी। यदि अपने जादू के जोर से वह कम्बखत आग में भी नहीं जलेगा। तो उसकी गर्दन को दोनों हाथों से दबा दूंगी। उसके कलेजे पर दोनों पैर रखकर उसके प्राण निकाल लूंगी। अहा! कितना आनन्ददायक दृश्य होगा वह, जब कि मैं अपने भाई के बैरी को मरता हुआ देखकर अपनी आंखें शीतल करूँगी।

(हँसती है)

(राक्षसगण चिता तयार करते है। जब चिता खूब प्रज्वलित हो उठती है, तब प्रह्लाद को उसके पास लाया जाता है)

ढुंढा--(प्रह्लाद से) ओ जादूगर लड़के! आज तेरा सारा जादू मै क्षण भर में नष्ट कर दूंगी। तेरी कोई भी करामात आज कार आमद नहीं होगी। तेरे जहरीले दांतो को उखाड़ कर तेरे समस्त विष को कील दूंगी।
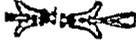
जलाकर खाक कर दूंगा कसोन तुझको मैं पल में।
न रक्षा तेरी हो सकती कहीं भी जल में या थल में॥

प्रहलाद—यदि भूआजी को इसी में आनन्द आता है, तो उनका प्यारा भतीजा भी जलने के लिए उनकी गोद मे बैठ जाता है। परन्तु मुझको अपने जल जाने का कुछ भी रञ्ज नहीं है; दुःखतो यही है कि मेरे कारण मेरी प्यारी भूआ को भी जल जाना पड़ेगा।

(प्रहलाद ढुंढा की गोद में बैठता है)

ढुंढा—(अट्टहास करती हुई) मूर्ख लड़के, तू अभी इस बात को क्या जाने। आग से खेलना मेरे लिए एक मामूली सी बात है। आग मुझको नहीं जला सकती। मुझे बरदान ही ऐसा मिला है।

प्रहलाद—यह बात है, फिर तो तुम्हारी गोद में आनन्द के साथ मरूंगा। ऐसा सुन्दर अवसर मुझे मरने के लिये फिर नहीं मिलेगा।

(महारानी आती हैं)

पुत्र, आज तो अपनी भूआ की गोद में तुम बड़े खुश दिखलाई देते हो। कारण क्या है? यह चिता क्यों प्रज्वलित की जा रही है?

प्रहलाद—माता जी, आज इसमे अधर्म की होली जलाई जायगी। दुराचार और अनाचार इसमें जल कर राख हो जावेंगे। परन्तु पिताजी समझ रहे है कि उनका प्यारा पुत्र जल कर इसमें राख हो जावेगा, और वे सुख की नींद सो सकेंगे।
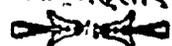
हिरण्य०-हाँ, हाँ, ऐसा अवश्य होगा। आज तू किसी प्रकार भी जीवित नहीं रहेगा। तेरे मर जाने पर समस्त राज्य में खुशियां मनाई जावेंगी, और संसार देखेगा कि तुझ जैसे नास्तिक राजद्रोहियों को चाहे वह जगन्नाथ का पुत्र ही क्यों न हो, कैसा कठोर दंड दिया जाता है।

महारानी-(ढुंढा से) ननदरानी ! तुम स्त्री हो। तुम्हारे हृदय में दया होनी चाहिए। दया करो मेरे बच्चे पर। उसको छोड दो। मैं तुम्हारा बड़ा अहसान मानूंगी।

ढुंढा-(डपट कर) चुप चुड़ैल ! आज मेरा अहसान मानने चली है। इससे पहले तो अपने महारानी पद की शान में मुझे कुछ समझती ही नहीं थी। मेरे कार्यों में बाधा डालने तक से नहीं चूकती थी। फिर अब मैं तुझसे बदला लेने मे क्यों चूकने लगी ?

महारानी-मैं तो तुम्हारी सदा से इज्जत करती आई हूँ। कभी तुम्हारा अनादर नहीं किया।

ढुंढा—उन बातों को तो सचमुच भूल ही गई। बड़ी भोली है न याद कर उस दिन की जब मैं अपनी दासियों को कोड़ों से पीट रही थी। तब तूने मेरे कर्त्तव्य-पालन में बुरी तरह रुकावट डाली थी। और उन सबको अपनी सेवा में लेकर मेरे रौब में फर्क डाला था। याद कर उस दिन की जब मैं अपने परम विश्वासी सेवक विकराल के साथ आधी रात के बाद जङ्गल में

घूमने गई थी, तब तूने मेरे प्यारे सेवक को बुरी तरह से फटकारा था। याद कर उस दिन की जब मेरा मित्र कलमुँहा आधी रात के अंधेरे में भूल से तेरे शयनागार में घुस गया था, और तूने उसे अपनी दासियों से अपमानित कराके राजमहल के बाहर निकलवा दिया था। ऐसी और भी बहुत सी बातें हैं, जिन्हें दुहराकर मैं अपना अमूल्य समय नष्ट नहीं करना चाहती। आज तुझसे बदला लेने का अच्छा मौका मिला है। भाग जा, अभागे पुत्र की माता! कहीं एकान्त में जाकर अपने मुख को आंसुओं से धो।

(ढुंढा प्रहलाद को गोद में लेकर अग्नि में बैठती है। कुछ ही समय में वह जल कर राख हो जाती है। प्रह्लाद पर अग्नि का कोई असर नहीं होता। उसके लिए अग्नि चन्दन की तरह शीतल होजाती है, और कुछ समय बाद बुझ जाती है। प्रह्लाद भगवानका नाम लेता हुआ महारानी के चरण-स्पर्श करता है। सब लोग आश्चर्य करते हैं। इसी समय पर्दा बदलना है।)

अंक तीसरा दृश्य पांचवां

स्थान—बाज़ार।

(बाज़ार में सब तरह की सामग्री की ऊँची-ऊँची दूकाने लगी हुई हैं। दुकानदारों में स्त्रियां पुरुष सभी सामान बेच रहे हैं बहुत से स्त्री-पुरुष और बालक सामान मोल ले रहे हैं। दूकानों में माँस और मदिरा की दूकानों की संख्या सब से अधिक है।

(मधुशालाओ में जवान लड़कियाँ मदिरा बेच रही हैं। एक बड़ी दूकान में सुरापान करने वालों की भीड़ लगी हुई है। उसमें आठ सुन्दर लड़कियाँ खरीददारों को शराब पिला रही हैं। एक बड़े कमरे में धनवान ग्राहकों के लिए बैठने और विश्राम करने का वेश क़ीमती सामान मौजूद है उसमें चार नवयुवक गद्दी तकियों पर बैठे हुए सुरापान कर रहे हैं। दो सुन्दरी नव यौवनाएँ उन्हें शराब पिला रही हैं। बीच-बीच में कुछ हँसी दिल्लगी भी होती जाती है।)

एक नवयुवक-(एक सुन्दरी के हाथ को चूमते हुए) चञ्चला सचमुच ही तुम जितनी सुन्दरी हो, उतनी ही गुस्ताख़ भी हो। मैं एक मास से बराबर केवल तुम्हारी ही ख़ातिर मधुशाला में आरहा हूँ। परन्तु तुमने आज तक मेरी हालत पर दया नहीं की। मेरे अरमान के बाग़ को अपनी प्रेम भरी चितवन से देख कर हरा-भरा नहीं किया।

चञ्चला– सूबेदार साहब, यह नाचीज़ लड़की आपकी सेवा करने योग्य नहीं है क्षमा करें मेरी आपके सामने हस्ती ही क्या है ?

सूबेदार—चञ्चला ऐसा न कहो। तुम बड़ी गुणशीला हो।

सुमति शील-सौन्दर्य आदि की तुम लतिका हो।
अनुपम नव यौवन की तुम विकसित कलिका हो॥
मेरे हृदय निकुञ्ज मञ्जु की तुम सुषमा हो।
चपला सी हो चपल गुणों में नई रमा हो॥

चञ्चला—नहीं महाशय ! मुझे तो अपने में एक भी गुण नहीं दिखलाई देता। मैं तो सेठ दरबारीलाल की एक क्रीत
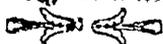
दासी हूँ। उन्होंने मुझ जैसे दो सौ दासियाँ दो-दो हजार रुपये मे अपना व्यापार चलाने के लिए खरीदी थीं। हम लोगो को किसी से प्रेम करने का अधिकार नहीं है। अपने रूप और यौवन के द्वारा पुरुषो को आकर्षित कर के उनसे पैसा छीनना ही हमारा दैनिक व्यापार है। उस पैसे में से केवल सोलहवां अंश हमको अपने भरण-पोषण के लिए मिलता है।

सूबेदार–तुम्हारी इस बात को सुन कर मुझे बहुत दुःख हो रहा है। यदि तुम मेरे साथ रहना पसन्द करो तो मैं सेठ का रुपया अपने पास से देकर तुमको अपने घर ले चलने को तैयार हूँ।

चञ्चला–सूबेदार साहब, आप अभी तक अविवाहित हैं क्या?

सूबेदार–मेरी पहली स्त्री अभी कुछ दिन हुए तब मर गई है। अब मैं तुम्हारे साथ विवाह करके अपना शेष जीवन आनन्द के साथ बिताना चाहता हूँ।

चञ्चला–(दूसरी सुन्दरी से) बहिन कमला, तुम्हारी इस विषय में क्या सम्मति है?

कमला–बहिन, तुम यदि अपने भावी जीवन को सुखी बना सको तो इससे बढ़ कर मेरे लिऐ आनन्द की बात क्या हो सकती है।

एक मोटा ताजी असुर शराब का प्याला हाथ में लिए हुए गिरता पड़ता प्रविष्ट होता है।]
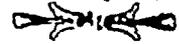
मोटा असुर-(कमला की तरफ घूरता हुआ) सुन्दरी ! अपने कमल से कोमल करों से हमको भी शराब पिलाओ ये मनुष्य तुमको क्या दे सकते हैं ? हम एक ही बार में तुमको निहाल कर देंगे ।

[कमला सुरा के पात्र में से उसके प्याले को भर देती है । असुर एक ही सांस में सब प्याले की शराब खत्म कर कर देता है । और उसके सामने पुनः खाली प्याला कर देता है । कमला उसे फिर भर देती है ।]

असुर—(धीरे-धीरे शराब पीते हुए) सुन्दरी ! हम एक घड़ा शराब दिन भर में पी जाते हैं । आज तुमको विशेष कष्ट नहीं देंगे । जानती हो, हम कौन हैं ? हमको इस शहर का बच्चा-बच्चा जानता है ।

कमला-सरकार को देखा तो कई बार है, परन्तु परिचय प्राप्त करने का सौभाग्य नहीं हुआ ।

असुर—तब तुम अभी बिल्कुल नई मालूम होती हो । जान पड़ता है, इस शहर में अभी हाल ही में आई हो । कहो, हमारा अनुमान कहाँ तक ठीक है ?

कमला-सरकार का ख़याल बिल्कुल ठीक है । मुझे यहां आये हुए अभी दो ही महीने हुये हैं ।

असुर-हम तुमको निहाल कर देगा, सुन्दरी ! जानती नहीं हो हम कौन हैं ?

कमला—जानती नहीं जानना चाहती हूँ ।

असुर-हम यहां के शहर कोतवाल दुराचरणजी के साले हैं । हमारा नाम है श्रीमान दानवकुल भूषण विकराल
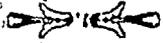
वदन। सारा शहर हमारे नाम से थर्राता है। हम तुमको मालामाल कर देगा सुन्दरी !

कमला—श्रीमान दानवकुल-भूषणजी ऐसे ही दानी सुने जाते हैं।

असुर हम तुमको अपने साथ हवा खिलाने ले चलेगा सुन्दरी ! याद रक्खो, हम तुमको निहाल कर देगा, सुन्दरी ! तुमको हमारे साथ चलना पड़ेगा। सुन्दरी, हम तुम्हें कोई कष्ट नहीं होने देगा। हमारी प्रेमिका अभी जल कर मर गई है, परन्तु तुमको कोई कष्ट नहीं होगा सुन्दरी।

कमला—सरकार, हमको किसी के साथ घूमने जाने की आज्ञा नहीं है, हम सेठ दरबारीलाल की दासी हैं।

असुर-दरबारीलाल तुमको रोक नहीं सकता, सुन्दरी ! हम अपने पैने नखो से उसका पेट फाड़ने जाता है।

[प्रस्थान]

[एक ओर दो बदसूरत पियक्कड नाचते-गाते और शोर गुल मचाते हुए दिखलाई देते हैं]

गीत नं० १३

हम पीते हैं मदिरा खूब। पीते हैं हम मदिरा खूब।
जाते नित्य नशे में डूब ॥
घर जाते गिरते पड़ते।
बीसों से लड़ते-भिड़ते ॥
गिरते कभी नालियों में।
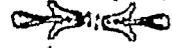
ऊधम करते गलियों में ॥
दरबाजों से टकराते ।
नाच-नाच कर फिर गाते ॥
पत्नी को करते फिर तग ।
रहती छिड़ी रात भर जंग ॥
नहीं कभी हम जाते ऊब ।
पीते हैं हम मदिरा खूब ॥

पियक्कड़ नं० १—कहो कण्टक बदन, आजकल कितनी ढाल रहे हो ?

पिय० २—कुछ न पूछो जलेतन, दिन और रात में पच्चीस बोतलों पर नम्बर पहुँच जाता है। हमारे बराबर पीने वाला कोई नहीं दीखता।

पिय० १—ऐसी शेखी मुझे पसन्द नहीं है, घसियारे के लड़के भी अब तो लम्बी चौड़ी बातें करते हैं। तू क्या पीएगा मेरे बराबर ? दिन भर में ही पच्चीस बोतलें फिर रात की तो कोई गिनती ही नहीं है।

पिय० २—ओ हो ! अब तो भटियारे का लड़का भी बढ़-चढ़ कर हाथ फेंकने लगा है। बाप रोटियां सेकने-सेकते काला पड़ गया था, और बेटा अब सुरापान द्वारा अपने शरीर को गुलाबी बना रहा है। चेहरे पर अंगूरी रौनक ला रहा है।

पिय० १—और अपनी नही कहेगा। बाप तो घास काटते-काटते धूप में सूखकर छुआरा हो गया था, और अब खुद कद्दू की तरह फूल गया है।
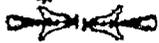
पिय० २—अब कुछ भी मेरी शान के खिलाफ कहा तो बदमाश के दोनों कान उखाड़ कर हाथ में रख दूंगा।

पिय० १-जितना मोटा होगया है, उतना ही पतला कर दूंगा साले को

[दोनों लड़ते हैं। पहले गाली-गलौज और फिर घूंसे बाजी होती है। चार बलवती स्त्रियां दोनों का कान पकड़ कर अलग करती हैं। वे उनसे भी अप शब्द कहने लगते हैं। स्त्रियां उनके गालो पर जोर जोर से थप्पड लगाती हैं। और उनको ढकेल कर दूकान से बाहर कर देती हैं। वे गालियां बकते और शोर गुल मचाते हैं]

पिय० १-मेरे सब जेवर और रुपये लूट लिए। हाय! हाय! यह मधुशाला है याकि डकैतों का अड्डा? जगदीश्वर की सौगन्ध खाकर कहता हूं कुल पांच हजार का माल था। लूट लो, और लूट लो। जो कुछ बचा है वह भी ले लो। ये कपडे भी उतरवालो। मगर एक प्याला तो (जोर देकर) अपने गोरे-गोरे हाथों से पिला दो वे रहम।

पिय० २-यहाँ से टलने वाले को लानत है। लूट लिया है। वो लूट लें। और कुछ चाहे तो और ले लें। गिन्नियाँ लें, मोहर लें। हजार दो हजार का माल खुशी से देने को हम तयार है। मगर विना शराब पिये टलने वाले नहीं। टलने वाले को लानत हैं।

(दूकान में फिर घुस जाता है, उसके पीछे-पीछे उसका साथी भी जाता है]

एक स्त्री–तुम लोग फिर आगये ?

पिय० १–तुमको छोड़कर हम स्वर्ग में भी नहीं जाना चाहते सुन्दरी। लाओ, पिलाओ। बढ़िया शराब अपने सुन्दर हाथों से पिलाओ।

स्त्री–शराब की कीमत जो तुम दोनों पर बहुत दिनों की बाकी है, पहले उसे चुकाओ।

पिय० २–पैसे की क्या पर्वा है सुन्दरी! मोहर लो रुपये लो, जमीन लो, जायदाद लो चाहे जो कुछ लो, मगर सुरा पान कराओ।

पिय० १–साकी जो मेरहवां हैं, पीने की जिक्र क्या।
निकलूंगा मयकदे से नहा कर शराब में॥

[हँसता है]

स्त्री–पहला रुपया चुका दोगे तब तुम्हारी कोई बात सुनी जायगी।

(दोनों पियक्कड अपनी- अपनी जेब टटोलते हैं : मगर उनमें एक पैसा भी नहीं निकलता)

पियक्कड़ १–श्रीमतीजी, इस समय पैसा नहीं है। पहले शराब पिलाओ, पैसा पीछे मांगना।

स्त्री—नहीं, यह नहीं होसकता। घर जाकर पहले रुपया ले आओ।

(दोनों पियक्कड बड़बडाते हुए जाते हैं। सेठ दरबारीलाल आते हैं, सब स्त्रियां उठ-उठ कर उनको अभिवादन करती हैं।)
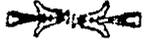
दरबारीलाल—(सब स्त्रियों से) सुन्दरियो ! हमने इस व्यवसाय को बन्द कर देने का निश्चय कर लिया है। इस कुत्सित व्यवसाय के द्वारा अब हम रुपया नहीं कमाना चाहते। अतएव अपनी सब मधुशालाओं को आज ही बन्द किये देते हैं। तुम सबको हमने अभी से स्वतन्त्र कर दिया। चाहे जहां जाकर तुम लोग अपने शेष जीवन को पवित्रता के साथ व्यतीत करने का प्रयत्न करो। प्रत्येक महिला को हम एक-एक सहस्र रुपया पुरस्कार स्वरूप देते हैं।

सब महिलाएँ—हम श्रीमान की अत्यन्त कृतज्ञ हैं। इस उपकार के आभार से कभी उऋण नहीं हो सकेंगी।

दरबारीलाल सब ललनाओं को एक-एक हजार रुपया देकर बिदा करते हैं। चंचला और कमला सूबेदार के साथ जाती हैं दरबारीलाल दूकान की सब शराब को फिकवा देते हैं। और दूकान की इमारत के सब कमरों में ताले लगवा देते हैं।

(पर्दा बदलता है)

अंक तीसरा — दृश्य छठवां

स्थान—सेठ दरबारीलाल का मकान।

(सुमति और सुबोध बातचीत कर रहे हैं)

सुमति—सुबोध ! तुम्हारे पिताजी को भगवान की कृपा से कुछ-कुछ बोध होने लगा है । अब वे परमार्थ सम्बन्धी बातों में दिलचस्पी लेने लगे हैं, और अपने पिछले जीवन से उन्हे घृणा होती जाती है । ज्ञान की जिज्ञासा भी उनकी बढ़ रही है । तुमने एक नई बात सुनी है ?

सुबोध—यही कि वे आज अपनी समस्त मधुशालाओं को बन्द करने गये ?

सुमति—हां हां यही ।

सुबोध—माताजी जान पड़ता है कि अब युग पलटने वाला है । दैत्यराज के प्रजाजनो की श्रद्धा और विश्वास अवनति पर है । हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद को मारने के अनेक उपाय किये परन्तु वे सब निष्फल हुए । इसके अतिरिक्त जनता की सहानुभूति दिनों दिन प्रह्लाद की ओर बढ़ रही है । और उसकी बातों पर बहुत से स्त्री पुरुष विश्वास करने लगे हैं । हिरण्यकशिपु के विश्वास पात्र सेवक भी अपने स्वामी का साथ छोड़ते जाते हैं ।

सुमति—मैं समझती हूँ कि वह दिन दूर नहीं है, जब कि सारी प्रजा हिरण्यकशिपु का विरोध करने को खड़ी होजावेगी,

और भगवान की कोई शक्ति उसका शीघ्र ही प्राणान्त कर देगी।

सुबोध–माता जी की धारणा सत्य प्रतीत होती है।

(दरबारीलाल आते हैं।)

सुमति—कहिए, क्या काम कर आये ?

दरबारी०—सब मधुशालाएँ बंद कर दी गईं। सारी शराब फिकवा दी गईं। मधुशालाओं की सब संचालिकाओं और मधुबालाओं को छुट्टी दे दी गई। इसके अतिरिक्त हरेक स्त्री को एक-एक हज़ार रुपया इनाम के तौर पर भी दे दिया है।

सुमति–आपने यह बड़े परमार्थ का काम किया है। सैकड़ों ललनाओं के जीवन को नष्ट होने से बचा दिया। भगवान तुम्हें इसका अनन्त फल प्रदान करेंगे। इस सत्कर्म के लिए आपको बधाई है।

सुबोध—इस शुभ कृत्य के लिये मैं भी आपको हार्दिक साधुवाद देता हूँ।

दरबारी०–धन्यवाद और बधाई के पात्र तुम और तुम्हारी माता हैं। कारण कि मेरे उत्थान का सम्पूर्ण श्रेय तुम दोनों को ही है।

सुमति—नहीं स्वामिन ! यह सब आपके पूर्व जन्मों का पुण्य प्रताप है। कुसंग के कारण आपका कुछ पतन होगया था। अब परमात्मा की प्रेरणा से आपने परमार्थ के परम प्रशस्त पथ पर पदार्पण किया है। ईश्वर आपकी इस सन्मार्ग में सहायता करे। श्रेय मार्गके विघ्न

आपको पथ-भ्रष्ट नहीं कर सकें। मेरी तो भगवान से केवल यही एक प्रार्थना है।

सुबोध—मैं भी यही कामना करता रहता हूँ कि पिता जी को अपने यथार्थ कर्त्तव्य का ज्ञान प्राप्त हो। और वे अपने धन के द्वारा जनता का कुछ हित-साधन कर सकें। अब मुझे अपनी कामना शीघ्र ही पूरी होती दिखलाई देती है।

दरबारी०-ईश्वर ऐसा ही करें। तुम्हारे जैसा पुत्र और सुमति जैसी स्त्री पाकर मैं आज अपने को धन्य समझता हूँ।

[मोटा असुर आता है।]

मोटा असुर-सेठ दरबारी, अब करो मरने की तैयारी। हम तुम्हारा पेट फाड़ने आया है। तुमने हमारी माशूका को बहुत सताया है।

(लड़खड़ाता है)

दरबारी०-मालूम पड़ता है, आज शक्ति से ऊपर पी गया है।

सुबोध—बदमाश को डंडो से पीट-पीट कर घर से बाहर निकाल दो।

दरबारी०-(असुर से) कहो, आज कैसे इधर कष्ट किया? तुम्हारी माशूका कौन है?

असुर—तुम्हारी दूकान पर मदिरा पिलाने वाली वही सुन्दर लड़की। जो हमेशा नीले रङ्ग की साड़ी पहने रहती है। जिसके ओंठ लाल लाल हैं गाल गुलाबी हैं; और दांत मोतियों के समान चमकते हैं। जिसकी चिबुक पर कुछ गुदा हुआ हैं, जिसके बाल रेशम से मुलायम हैं और

जिसकी बहुत ही पतली कमर बातें करने में हवा से बातें करती है। जरासा चलने में ही तीन तीन बल खाजातीहै यानी बड़ी ही लचकीली कमर है जिसकी बड़ी ही कटीली आंखेहैं जिसकी और बड़ीही लजीली चितवन है जिसकी, वहीमेरी माशूका है। मैं उसे निहाल कर दूंगा। तुम उसे मेरे साथ घूमने जाने की आज्ञा दे दो। यदि तुम उसे आज्ञा नहीं दोगे तो मैं अपने पैने-पैने नखों से तुम्हारा पेट फाड़ डालूंगा। तुम्हारे इस मुँह जोर लड़के को दांतों से चबा जाऊंगा। और तुम्हारी इस लावण्यमयी पत्नी को पकड़ कर ले जाऊंगा।

(हँसता है)

दरबारी०—विकराल वदनजी, हमने अपनी सब दासियों को स्वतन्त्र कर दिया है। तुम्हारी माशूका भी उनके साथ आज़ाद कर दी गई है। तुम जाकर उसको तलाश लो अभी इसी शहर में होगी।

असुर—अच्छा, हम उसको अभी तलाशने जाता है। हम उसको अपने घर ले जावेगा। हम उसको निहाल कर देगा सेठ जी।

(प्रस्थान)

सुमति—यह बदमाश कौन था ?

दरबारी०—यहां के प्रधान नगर-रक्षक (कोतवाल) दुराचरण का साला। बड़ा शराबी औरदुष्ट है।

[दरवाजे पर हिरण्यकशिपु का सिपाही आवाज देता है।]

दरबारी०—सुबोध, देखो तो कौन है ?

[सुबोध बाहर जाता है, और कुछ देर बाद वापिस आता है ।]

. हिरण्यकशिपु का सिपाही आपको बुलाने आया था। मैंने उससे कह दिया कि आजकल वे एक आवश्यक कार्य में लगे हुए हैं। दो चार दिन तक नहीं आ सकेंगे।

सुमति—तुमने ठीक उत्तर दे दिया। उस दुष्टात्मा से जहाँ तक हो सके बचना ही चाहिए।

दरबारी०—इस उत्तर को सुन कर वह क्रुद्ध तो बहुत होगा।

सुबोध—अजी, प्रहलाद के कारण ही वह परेशान हो रहा है। इन छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देने का उसे अवसर ही कहाँ है ?

सुमति—वह क्रुद्ध हो या प्रसन्न, उसकी तुम्हे कुछ भी पर्वा नहीं करना चाहिए।

(पर्दा गिरता है)

अंक तीसरा दृश्य सातवां

स्थान—महारानी का विश्रामगृह।

[महारानी कुछ चिन्ताग्रस्त सी बैठी हुई गा रही है।]

गीत नं० १४

फँसी है भँवर में नौका किनारे तुम लगा देना।
है सोता भाग्य का केवट कृपा करके जगा देना॥
दुखों की उठ रही लहरें विपद की आगई आंधी।
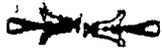
महा संताप के इस मच्छ को ईश्वर भगा देना ॥

[विमला और निर्मला आती हैं ।]

विमला-महारानी जी, धैर्य धारण कीजिए । भगवान सब भला करेंगे ।

महारानी-विमले ! आज रात्रि को मैंने एक बड़ा भयानक स्वप्न देखा है ।

विमला-क्या स्वप्न देखा है महारानी जी ?

महारानी क्या कहूँ बहिन ? उसका स्मरण आते ही कलेजा कांपने लगता है । आँखों से आँसू निकले पड़ते हैं । एक विचित्र आकृति का पुरुष जिसकी हूँकार मात्र से दशों दिशाएँ दहल उठी थीं, महाराज की छाती पर बैठ कर अपने तीखे नखो से उनकी आँतों को निकालने लगा ।

(रुदन)

निर्मला-महारानी जी, घबड़ाइए नहीं । स्वप्न की बातें सत्य नही हुआ करती ।

महारानी-यह तो ठीक है, बहिन । परन्तु मैने आज तक ऐसा भयानक स्वप्न कभी नहीं देखा ।

विमला-तुम्हारा पुण्य-प्रताप महाराज की रक्षा करेगा ।

महारानी-बहिन, थोड़ा कष्ट करो । महाराज को मेरे पास बुला लाओ ।

विमला-जो आज्ञा । (जाती है)

निर्मला-महारानी जी, स्वप्न की बात को बिल्कुल भूल जाइए ।

महारानी-मैं उसको भूलने का बहुत कुछ प्रयत्न कर रही हूँ परन्तु नहीं भूल सकती, बहिन । बारम्बार वही
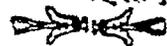
भयानक दृश्य मेरी आँखों के सामने नाचने लगता है।

निर्मला—मैं कोई गीत सुनाऊँ, जिससे कुछ चित्त बहले।

महारानी—जैसी तुम्हारी इच्छा। [निर्मला गाती है।]

गीत नं० १५

विश्व-प्रेम के स्वच्छ सरोवर में हम नित्य नहावें।
परहित के वस्त्राभूषण से अपनी देह सजावें ॥
मस्तक पर हम पुण्य-तेज का माता तिलक लगावें।
सत्य, सरल सुन्दर भावो से तुम्हे पूजने आवें ॥
भक्ति-पूर्ण निज विमल हृदय की अनुपम भेंट चढ़ावें।
भली भाँति तुमको प्रसन्न कर माँ! हम यह वर पावें ॥

"खण्ड-खण्ड हो देह हमारी,
तो भी तजें नहीं निज धर्म।
रखें स्वतन्त्र विचार सर्वदा,
स्वार्थ-रहित हो करें सुकर्म ॥
देश-जाति की सेवा ही में,
तन-मन-जीवन आवें काम।
अङ्कित रहें हृदय-पट पर माँ,
निशि-दिन तेरे चरण ललाम,

महारानी—जगन्माता की यह स्तुति बहुत ही सुन्दर है, बहिन। तुमने इसकी रचना में सचमुच कमाल कर दिया है। थोड़े से में सभी उच्च विचारो का समावेश कर देना केवल तुम्हारा ही काम है।

निर्मला—यह सब महारानी जी का ही आशीर्वाद है यदि आज्ञा होतो कुछ कविता और सुनाऊँ?
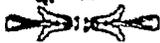
महारानी०—अवश्य सुनाओ, बहिन। (निर्मलाकविता सुनाती)

(घनाक्षरी)

स्वर्ग-राज्य की भी चाह माधव ! नहीं हो मुझे,
तेरे पाद-पङ्कजों का उर में गुमान हो
चिन्ता खान-पान, धन-धाम की कभी न करूं,
रात-दिन अन्तर में तेरा अवधान हो॥
तेरी बात प्यारे ! सिर्फ कानों से सुनूं मैं सदा,
मेरे रोम-रोम रमी तेरी मुसकान हो।
तेरी मञ्जु मूर्त्ति मेरे नयन-निकुञ्ज में हो,
मुख से सदैव प्यारे ! तेरा गुण-गान हो॥

महारानी—बहिन, अब तो तुम बड़ी सुन्दर कविता बनाने लगी हो। बधाई है, इस सफलता पर।

निर्मला—यह सब महारानी जी की कृपा का फल है।

[हिरण्यकशिपु और विमला आती है।]

हिरण्य०—महारानी ने आज मुझे किस लिए याद किया है ?

महारानी—विराजिए प्राणनाथ ! आज आपसे कुछ प्रार्थना करना चाहती हूँ।

[हिरण्यकशिपु एक चौकी पर बैठता है।]

कहिये,क्या आज्ञाहै? तुम्हारा पुत्र तो अभीतक कुशलसहित है।

महारानी—वह अपने पुण्यों के फल से अभी तक बचा हुआ है। बड़ा अच्छा हो, यदि जगन्नाथ उसको अब भी क्षमा करदें।

हिरण्य०—क्या बकती हो, महारानी ? वह क्षमाके योग्य नहींहै। एकनएक दिन उसको मेरे हाथोसे अवश्यमरना होगा।

महारानी—नही स्वामिन ! ऐसा न करें। उसे क्षमा करदें और
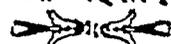
भगवान से बैर करना छोड़ कर प्रीति करना सीखें। मैं आपके भले के लिए ही कहती हूँ नाथ !

हिरण्य०–महारानी, क्या तुम भी पागल हो गई हो ? भगवान कौन है ? भगवान तो मैं हूँ।

महारानी–मैं किस तरह कहूँ कि आप भगवान नहीं हैं। मेरे भगवान तो आप ही हैं। परन्तु संसार तो अब आपको भगवान नही मानता। और फिर आपके ऊपर भी तो कोई शक्ति है। उसी जगन्नियन्ता जगदीश्वर की सत्ता को स्वीकार कीजिये। उसके चरणों में प्रीति करना आरम्भ कीजिए।

हिरण्य०–महारानी, तुम भी सचमुच पागल हो गई हो। जान पड़ता है उस जादूगर प्रहलाद ने तुम्हारे ऊपर भी अपना जादू कर दिया है। इससे पूर्व तो तुम कभी इस प्रकार की बातें नही करती थीं।

(हँसता है)

महारानी–महाराज ! यह हँसने का समय नहीं है।

हिरण्य०–यह पागल के रोने का समय है। अच्छा, अच्छा। महारानी रोओ, खूब रोओ। जितना चाहो उतना रो सकती हो, तुम्हें कोई नहीं रोकेगा। परन्तु मुझसे तो तुम्हारे साथ नहीं रोआ जावेगा क्योंकि मुझे कभी आज तक रोने का अवसर ही नहीं पड़ा। मैं रोना जानता ही नहीं। मै तो हमेशा हंसता रहा हूँ। जब तुम्हारे हंसने का समय आवेगा तब मैं भी खुशी से तुम्हारा साथ दूंगा।

(हँसता है)
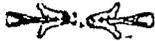
महारानी—दुःख है कि आप मेरी बात को हँसी में उड़ा रहे हैं। मैंने आज एक स्वप्न देखा है।

हिरण्य०—तब क्या सारे राज्य में यह ढिंढोरा पिटवा दिया जाय कि महारानी ने एक स्वप्न देखा है। क्या स्वप्न देखना भी कोई अनोंखी बात है ?

महारानी—स्वप्न देखना अनोंखी बात तो नहीं है महाराज। परन्तु वह स्वप्न कोई साधारण स्वप्न नहीं है। बड़ा ही भयानक स्वप्न है वह।

हिरण्य०—हमारे भूतपूर्व सेवक भयंकर से भी अधिक भयानक होगा वह। अच्छा, महारानी कहो, मैं तुम्हारे स्वप्न सुनने के लिये उद्यत हूँ।

महारानी—मैंने स्वप्न में एक विचित्र आकृति के पुरुष को महाराज की छाती पर चढ़े हुये देखा। फिर इससे आगे जो कुछ देखा वह कहा नहीं जाता, नाथ! बड़ा ही भयानक दृश्य था वह। उसका ध्यान आते ही मेरी आँखों से आंसू निकल पड़ते हैं। रोकने पर भी नहीं रुकते।

(रोती है)

हिरण्य०—छी! रोती हो महारानी! परम प्रतापी जगन्नाथ की पत्नी होकर इतनी दुर्बलता! मेरे लिये नितान्त उपेक्षनीय है यह। संसार में कोई ऐसा नहीं है, जो मेरा कुछ भी अमंगल कर सके। कोई ऐसा जीव नहीं है, जो मेरी ओर आंख उठा कर भी देख सके।

हजारों प्राणियों को मैं अकेला मार सकता हूँ॥

हरी को और मैं देवेन्द्र को संहार सकता हूँ ॥
जिधर को दृष्टि डालूंगा उधर ही बस प्रलय होगी।
जगत् की शक्ति मेरी शक्ति में आकर के लय होगी ॥

[प्रस्थान]
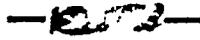
अंक तीसरा दृश्य आठवां

स्थान—दरबारीलाल का मकान।

[दरबारीलाल, सुबोध और सुमति बातें कर रहे हैं]

सुमति—मेरे हृदय में भगवान की कब ऐसी प्रेरणा हो रही है कि हमको जनता की आंखें खोल देना चाहिये। उसको अज्ञान के अन्धकार से निकाल कर ज्ञान के प्रकाश में लाने का प्रयत्न करना चाहिए। उसको बता देना चाहिये कि वह अपनी भ्रान्ति और भय का परित्याग करके नकली ईश्वर की उपासना को छोड़ दे और असली ईश्वर के चरणों में चित्त लगावे।

सुबोध—हमको ऐसा अवश्य करना चाहिये।

दरबारी०—इसका श्री गणेश किस प्रकार किया जाय।

सुमति—हम सब को मिलकर मोहल्ले-मोहल्ले और ग्राम-ग्राम में पहुँच कर, जनता को परमात्मा के सच्चे स्वरूप का यथार्थ-ज्ञान कराते हुए हिरण्यकशिपु के ईश्वरत्व की सारी पोल खोल देने का उद्योग करना चाहिये। सम्भव में हमारे इस सत्कार्य में अनेक विघ्न-बाधाएँ उपस्थित हों, बहुतसी कठिनाइयों का हमको सामना करना
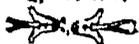
पड़े। परन्तु हमको उससे किञ्चिन्मात्र भी हतोत्साह नहीं होना चाहिए। मुझे आशा है कि ईश्वर हमारी इस कार्य में अवश्यमेव सहायता करेगा, और हम को सफलता प्राप्त करने में अधिक समय नहीं लगेगा। धीरे-धीरे हमारे अनुयायियों और सहायकों की संख्या बढ़ती जायगी, और फिर हमको विशेष परिश्रम करने की आवश्यकता भी नहीं पड़ेगी।

[दुर्दान्त आता है]

दरबारी०—कहिये महाशय! आज इधर कैसे भूल पड़े। आपके महाप्रभु तो कुशल पूर्वक हैं?

दुर्दान्त—मैंने कई दिन से उनके पास जाना छोड़ दिया है। अब मेरा उन पर विश्वास उठ गया है। जब से मैंने पहाड़ के नीचे भगवान की विश्व मोहिनी छवि के दर्शन किये हैं तभी से मेरे जीवन में एक विशेष परिवर्तन होगया है। अब आठों पहर उन्हीं के दर्शनों के लिये व्याकुल रहता हूँ। सुना है, तुम्हारे जीवन में भी इधर कुछ ही दिनो में बहुतसा परिवर्तन हुआ है। अपनी विदुषी श्रीमती जी की कृपा से तुमने स्वार्थ के पथ को त्याग कर परमार्थ मार्ग पर कदम रक्खा है। इसलिए मैं तुमसे मिलने के लिए अधिक उत्सुक हो उठा था। (सुमति की ओर देख कर) कदाचित् यही तुम्हारी देवी हैं?

दरबारी०—हाँ भाई, यही मुझ ग़रीब की लक्ष्मी हैं।

दुर्दान्त—(सुमति को प्रणाम करके) अहा! कितना दिव्य वन्दनीय स्वरूप है इनका!

विवेक आदि की ललित लता सी।
शम-दम की पुण्य-प्रभा सी॥
त्राण और कल्याण-कारिणी हैं वसुधा सी।
गिरिजा सी हैं तेजमयी हैं निपुण रमा सी॥

सुमति—भाई दुर्दान्त जी! मैं तुमसे कुछ सेवा कराना चाहती हूँ।

दुर्दान्त—बहिन जी की सेवा करके मैं अपने को कृतार्थ समझूंगा।

सुमति—भाई, आपको मेरी कुछ भी सेवा नहीं करनी होगी। हम सभी भगवान के सेवक और सेविकाएँ हैं तुमको अपने प्यारे भगवान की ही सेवा करने का सुअवसर मिल रहा है। जनता की सेवा द्वारा ही तुम जनार्दन की सेवा तक पहुँच सकोगे।

दुर्दान्त—(आनन्दित होकर) अहा! मुझको अपने प्रभु की सेवा करनी पड़ेगी।

[आनन्द-विभोर होकर नाचने लगता है]

(पट-परिवर्त्तन)

अंक तीसरा   दृश्य नवां

स्थान—महारानी का पठनागार।

[महारानी एक स्वर्ण की सुन्दर चौकी पर कुछ उदास सी बैठी हुई हैं। एक दूसरी चौकी पर उनके समीप ही, उनकी वीणा रक्खी हुई है]

[कुछ रुक-रुक कर यह गाती हैं]

गीत नं० १६

मेरी इस टूटी वीणा के हे भगवन् ! तार तुम्हीं तो हो ।
मेरी जीवन की नौका के प्रभुवर ! पतवार तुम्हीं तो हो।।
दुख के बादल घिर आये हैं, चिन्ता की रजनी छाई है ।
ऐसे संकट के कुसमय मे, बस खेवन हार तुम्ही तो हो।।
माधव ! यह सागर है अगाध, तट नहीं दिखाई देता है ।
करुणा की चितवन होजावे, हरि, करुणागार तुम्हीं तो हो।।

दयालो ! दया कीजिए । मेरे पुत्र और पति की रक्षा कीजिए । आप जगत्पिता हैं । सबके अपराधों को क्षमा करते रहते हैं । आपको छोड़ कर हमारी कोई दूसरी गति नहीं है ।

[विमला घबड़ाई हुई आती है]

महारानी जी ! बहुत दुःख के साथ कहना पड़ता है कि महाराज ने राजकुमार प्रहलाद जी को लोहे के स्तम्भ से बंधवा दिया है, और तल्वार निकाल कर उनका वध करने को तैयार खड़े हैं । आप [illegible] ।

[रानी और विमला भाग कर जाती हैं]

(पर्दा बदलता है)
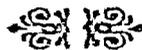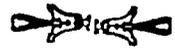
अङ्क तीसरा दृश्य दशवां

स्थान—एक मोहल्ला।

[बहुत से मकानों के बीच में एक बहुत लम्बा-चौड़ा मैदान है। वहां पर बहुत से स्त्री-पुरुष और बालक बालिकाएँ एकत्र हैं। दरबारीलाल सुमति सुबोध और और दुर्दान्त आठ दस अन्य आदमियों के साथ एक ऊँची जगह पर खड़े हुए जनता को उपदेश कर रहे हैं। ये सब पीले रङ्ग के वस्त्र पहने हुए हैं सुमति एक वीणा हाथ में लिए हुए गा रही है। सब जनता ध्यान पूर्वक सुन रही है।

गीत नं० १७

आंखें खोलो हुआ विहान
अब तो इस प्रमाद-निद्रा में सोओ मत अनजान।
कहते हो तुम अपना-अपना।
देख रहे हो यह जो सपना,
यह सब माया का प्रसार है, तज दो यह अज्ञान।
आंखें खोलो हुआ विहान।
जगका यह सुख नाशवान है।
इसका तुमको नहीं ज्ञान है।
अन्तकाल में पछताओगे, जब निकलेंगे प्रान।
आँखें खोलो हुआ विहान।
जो सच्चिदानन्द अक्षर है,
केवल वह ही जगदीश्वर है,

दैत्यराज राजा हैं बेशक, किन्तु नहीं भगवान।

आँखें खोलो हुआ विहान।

दयासिंधु हरि नित्य निरञ्जन,

भक्त जनो के हैं जीवन-धन।

उनके भक्ति-भाव से ही पद मिलता है निर्वान॥

आँखें खोलो हुआ विहान॥

भाइयो और बहिनो! संसार में सुख की खोज सभी करते हैं। परन्तु सांसारिक भोगैश्वर्य को ही सुख की चरम सीमा समझ लेना, भूल है। संसार के सभी सुख नाशवान है, अनित्य हैं। इसी प्रकार जो मनुष्य अपने सत्कर्मों द्वारा स्वर्गादि लोकों के भोगों को प्राप्त करते हैं, अन्त को वे भी अपने पुण्यों के क्षीण हो जाने पर फिर अपनी पूर्वावस्था में ही लौट आते हैं। देवताओं की पूजा करने वाले देवताओ को, राक्षसों की पूजा करने वाले राक्षसो को और पिशाचों की पूजा करने वाले पिशाच-योनि को प्राप्त होते है। जो लोग भगवान् की उपासना करते हैं उन्ही को भगवान् प्राप्त होते हैं।

यदि तुम नित्य सुख की चाह करने हो तो भगवान की भक्ति पूर्वक सेवा करो। उन्हीं के नाम और गुणों का स्मरण तथा कीर्त्तन करो, उन्हीं का वन्दन और पूजन करो तथा उन्हीं को अपना स्वामी, सखा और प्रियतम समझो। केवल उन्हीं को आत्म-समर्पण करो। सदा निर्द्वन्द्व, नित्य सत्वस्थ, एवं निर्योगक्षेम रहो, और आत्मवान बनो। भगवान से कभी किसी प्रकार की कामना मत करो। सच्चा और अनन्त सुख केवल भगवान के चरणों में ही है।

प्रजा जनों में से एक—अगर यथार्थ हिरण्यकशिपु भगवान नहीं हैं इसका आपके पास क्या प्रमाण है ?

सुमति—भगवान की इच्छा मात्र से समस्त जगत् की उत्पत्ति और प्रलय होती है। यदि हिरण्यकशिपु परमात्मा होते तो प्रह्लाद उनके बारम्बार मारने की चेष्टा करने परभी कदापि जीता नही रहता। परमात्मा निर्लेप, निरञ्जन और निर्विकार है। और हिरण्यकशिपु दिन-रात भोग विलास मे लिप्त रहता है, मांस-मदिरा और सुन्दरियों के सहवास मे जीवन बिताना ही उसका मुख्य लक्ष्य होता है। परमात्मा दया और करुणा के धाम हैं, इसके विपरीत हिरण्यकशिपु में दया और करुणाका नाम भी नहीं है। परमात्मा समदर्शी और न्यायी है, और हिरण्यकशिपु पक्षपात से पूर्ण, अन्यायी तथा परम स्वार्थी है, इससे अधिक उसके ईश्वर न होने के प्रमाण क्या बतलाये जॉय ?

सब प्रजा जन—ठीक है, देवी जी का कथन सर्वथा सत्य प्रतीत होता है। अब हम लोगों को उनके कथन में रत्ती भर भी सन्देह नहीं है।

एक दूसरा०—हम लोगों को सत्य के मार्ग से हटाने में हिरण्यकशिपु ने छल और बल सभी का प्रयोग किया। सारी प्रजा उसके अत्याचारी शासन से ऊब उठी है।

तीसरा०—जान पड़ता है पीड़ित प्रजा का करुणा क्रन्दन
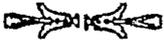
अब भगवान अधिक नहीं सुनना चाहते ; शीघ्र ही इस अत्याचारी शासन का अन्त होने वाला है।

सब लोग— आपका कहना ठीक है, भाई।

सुमति—मेरी इच्छा है कि हम सब मिलकर भगवान से प्रार्थना करें।

सब लोग–(एक स्वर से) अवश्य! अवश्य!

[दरबारीलाल, दुर्दान्त, सुबोध और सुमति प्रार्थना का एक एक पद पहले कहते जाते हैं, शेष सब उसको दुहराते हैं]

गाना नं० १८

हम मोह की है मूर्ति भीषण, स्वार्थ के भंडार हैं।
हम काम के हैं दास एवं क्रोध के आगार हैं॥
हम लोभ के हैं मित्र, मत्सर-दम्भ-दर्प-निधान हैं।
हम कपट के हैं सदन, अगणित पातकों की खान हैं॥
हम क्लेश से आवृत्त हैं हम कर्म में तल्लीन है।
सन्देह से हम पूर्ण हैं, हम विषय-जल की मीन हैं॥
हम में नहीं शम-दम तथा उपरति-तितिक्षा भी नहीं।
कुछ वेद या वेदान्त की सर्वोच्च शिक्षा भी नहीं॥
मख तप तथा शुभ दान के भी सुकृत से हम हीन हैं।
वैराग्य का भी धन नहीं, भगवान हम अति दीन हैं॥
भव-सिन्धु से कैसे तरें ? यह तो अगाध अपार है।
तेरी दया की भीख का ही एक बस आधार है॥